मासिक

अध्यात्म संदेश

जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक पत्र

वर्ष : 3 | अंक : 06 | पृष्ठ : 56 | मूल्य : निःशुल्क | इंदौर–उज्जैन | रविवार 1 जनवरी 2023 | पौष/ माघ मास (11), विक्रम संवत् 2079 | इ. संस्करण

प्रकाशक

गोरक्ष शक्तिधाम
सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
अध्यात्म • शिक्षा • संस्कृति • स्वास्थ्य

प्रेरणा स्रोत
महासिद्ध गुरू गोरक्षनाथ जी

सलाहकार समिति
महंत बालक नाथ योगी जी
गद्दीनशीन महंत, मठ अस्थल बोहर, रोहतक
संसद सदस्य (लोकसभा), अलवर, राजस्थान
कुलाधिपति, श्री बाबा मस्तनाथ विश्वविद्यालय (हरियाणा)

महंत पीर योगी रामनाथ जी
भर्तृहरि गुफा, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

महंत डॉ. योगी विलासनाथ जी
अध्यक्ष, श्री गुरू गोरक्षनाथ शिव पंचायतन मन्दिर (ट्रस्ट), गाळणे (महाराष्ट्र)

राष्ट्रसंत बालयोगी उमेशनाथ जी
पीठाधीश्वर–वाल्मीकि धाम, उज्जैन (मध्य प्रदेश)

प्रधान सम्पादक
योगी शिवनन्दन नाथ

सम्पादक मंडल

वरिष्ठ सम्पादक
डॉ. संतोष खन्ना (दिल्ली)

सम्पादक
डॉ. शकुंतला कालरा (दिल्ली)

सह सम्पादक
डॉ. दिग्विजय शर्मा (आगरा)

उपसम्पादक
सुश्री इंदु सिंह ''इन्दुश्री'' (मध्य प्रदेश)

ग्राफिक्स
IDEAwave COMMUNICATIONS

प्रकाशक एवं स्वामी
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन

- गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउंडेशन सर्वाधिकार सुरक्षित। किसी भी रूप में सामग्री की नकल प्रतिबंधित।
- पत्रिका में प्रकाशित सामग्री का समस्त उत्तरदायित्व लेखकों का है। प्रकाशक, प्रधान संपादक एवं संपादक मंडल इसके लिए किसी भी प्रकार से उत्तरदायित्व नहीं होंगे।
- समस्त विवादों का निस्तारण, मध्य प्रदेश सीमांतर्गत सक्षम न्यायालयों में किया जाएगा।

editor.adhyatmsandesh@gmail.com

अनुक्रमणिका

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ क्र.
1	संपादकीय	डॉ. शकुंतला कालरा	03
2	प्रार्थना और मंत्र	डॉ. अर्चना प्रकाश	05
3	नव वर्ष के दोहे	प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे	06
4	वैश्विक परिदृश्य में राष्ट्रभाषा...	डॉ. अजय शुक्ला	07
5	स्वामी विवेकानंद....	डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम	10
6	श्री राम मानस–राम...	श्रीमति संतोष बंसल	12
7	समाज और राष्ट्र के कर्णधार हैं...	कृष्ण कुमार यादव	13
8	सरस्वती वंदना	अंकुर सिंह	16
9	अखिल भारतीय सारस्वत सम्मान....	अध्यात्म संदेश डेस्क	17
10	बच्चों में संस्कारों का अभाव...	श्रीमति सुषमा सागर मिश्रा	23
11	मानस की प्रासंगिकता	डॉ. सुनीता सिंह 'सुधा'	25
12	सत्संग की महिमा	डॉ. शकुंतला कालरा	28
13	अर्चन वंदन तुम्हें मां भारती	सुजाता प्रसाद	33
14	श्री राम की अँगूठी का रहस्य	डॉ. नरेन्द्र मेहता	34
15	स्वतंत्रता सेनानियों में सिरमौर....	डॉ. सन्तोष खन्ना	38
16	वृद्धजनों की उपेक्षा क्यों?	डॉ. विद्यासागर मिश्र 'सागर'	41
17	रिश्तों का मनोविज्ञान	विजय कुमार तिवारी	43
18	दृश्य – श्रव्य माध्यमों के प्रभाव	सौ. भावना दामले	45
19	सशक्त बनकर, विश्व मंच....	राजकुमार जैन राजन	46
20	मूलयाधारित पत्रकारिता की...	डॉ. बी. के. मेधावी शुक्ला	48
21	दागदार होता गुरू – शिष्य का रिश्ता	मधुबाला शांडिल्य	51
22	याददाशत बढ़ाने का करें उपचार...	डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)	52
23	महामानव बननें की सहज साधना	डॉ. साधना गुप्ता	54
24	नव वर्ष में खुशहाल बने हमारा...	लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव	56

संपादकीय

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

अपने सारगर्भित शोधपूर्ण सुंदर आलेखों द्वारा पत्रिका को सुंदर स्वरूप प्रदान करने वाले सभी साहित्य-साधकों को मेरा सादर अभिवादन। आप सभी को नव वर्ष 2023 की हार्दिक शुभकामनाएं। हम सबका यह परम सौभाग्य है कि ईश्वर ने हमें नव वर्ष में प्रवेश का सुअवसर दिया है। नए वर्ष में नए संकल्प लेने की आवश्यकता है। अपने निजी जीवन में कुछ अप्रिय अथवा बुरा छोड़ने का, जो तुम्हारे जीवन में पवित्र नहीं हैं उसे समाप्त कर देने का संकल्प ले सकते हैं। । समाज के लिए कुछ नए कार्य करने, किसी हितकारी योजना से जुड़कर उसमें यथाशक्ति तन-मन-धन से सहयोग देने का संकल्प ले सकते हैं। नव वर्ष सबके लिए मंगलमय हो। स्वास्थ्यवर्धक हो। कोरोना अपने नए वेरियस के साथ चीन में कोहराम मचा रहा है। विश्व के कई हिस्सों में वह अपने पाँव पसार चुका है। माननीय प्रधानमंत्री जी का देशवासियों के लिए संदेश है कि कोरोना के खिलाफ़ हमारी केंद्र सरकार पूरे एक्शन में है, फिर भी उससे निपटने के लिए देशवासी जागरूक रहें। कोरोना प्रोटोकाल का पूरा पालन करें। नव वर्ष मनाएं, किंतु पूरी सतर्कता के साथ।

हमारा देश जहां विविध ऋतुएं अपना सौंदर्य बिखेरती हैं। शिशिर ऋतु ने अपना रंग दिखाना शुरू कर दिया है। पूरा देश ठंड, कोहरे और शीत लहर की गि. रफ्त में है। हर मौसम का अपना मिज़ाज़ है, अपनी विशेषता है। यहां हर ऋतु के हर मास में पर्व-त्योहारों का मेला लगता है। पौष मास में मकर संक्रांति और लोहड़ी बहुत बड़े त्योहार आ रहे हैं।

लोहड़ी उत्तर भारत का एक प्रसिद्ध त्योहार है जो मकर संक्राति के एक दिन पहले मनाया जाता है। रात्रि में खुले स्थान अथवा मंदिर के प्रांगण में परिवार और आस-पड़ोस के लोग आग का घेरा बनाकर बैठते हैं। इस समय रेवड़ी, गज़्जक, मूँगफली और फुल्ले आदि अग्नि को अर्पित किये जाते हैं और सबको प्रसाद रूप में यह प्राप्त होता है।

मकर संक्राति पूरे भारत में मनाए जाने वाला साल का पहला बड़ा त्योहार है। मकर संक्राति सूर्यदेव का आशीर्वाद लिए आ रही है। सूर्य प्रत्येक माह राशि परिवर्तन करते हैं। जनवरी 14 तारीख को यह मकर राशि में प्रवेश करते हैं। सूर्य छः माह दक्षिणायण रहने के

पश्चात् मकर संक्राति के दिन उत्तरायण हो जाते हैं। 'उत्तरायण' पारंपरिक रूप में देवत्व और नई शुरुआत की अवधि के रूप में जाना जाता है, जिसे हमारे सनातन धर्म में बहुत शुभ माना जाता है। इस अवसर पर भगवान विष्णु की पूजा का भी विधान है। शास्त्रों और पुराणों में कहा गया है कि मकर संक्राति के दिन भगवान विष्णु की तिल से पूजा करनी चाहिए। तिल से भगवान विष्णु की पूजा करने वाला पाप-मुक्त होकर मोक्ष को प्राप्त करता है। इसी दिन भक्त, भगवान विष्णु के साथ देवी लक्ष्मी की भी पूजा करते हैं। देश की विभिन्न नदियों में स्नान भी किया जाता है। भारत के हर राज्य में मकर संक्राति मनाने के अलग-अलग तरीके हैं। मकर संक्राति अनिवार्य रूप से फसल का उत्सव है। मकर संक्राति से सूर्य उत्तरी गोलार्ध की ओर बढ़ना शुरु करता है जो सर्दी के अंत की सूचना देता है। इस दिन से दिन बड़े होने लगते हैं।

जनवरी माह में ही गणतंत्र दिवस मनाया जाता है। इस वर्ष का गणतंत्र दिवस निश्चय ही बहुत महत्त्वपूर्ण है क्योंकि यह 74वाँ गणतंत्र दिवस है। अगले वर्ष 75वाँ गणतंत्र दिवस मनाने का गौरव प्राप्त होगा। 26 जनवरी यों भी महत्त्वपूर्ण है कि 15 अगस्त को स्वाधीनता दिवस मनाए जाने से पहले 26 जनवरी को ही गणतंत्र दिवस मनाया जाता था क्योंकि इसी दिन पूर्ण स्वाधीनता की शपथ ली गई थी। हमने अपना संविधान लागू किया और अपनी स्वाधीनता को सार्थक बनाने का संकल्प लिया था। आज हमारा राष्ट्र विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है। इस तरह संविधान का ग्रंथ हमें मिल गया।

त्योहार हमारे लिए बहुत बड़ी भूमिका निभाते हैं। ये हमें नैतिक, सामाजिक, भावात्मक तथा आध्यात्मिक अनुशासन सिखाते हैं। आप सभी त्योहारों को प्रसन्नतापूर्वक मनाएँ। इसी मंगल कामना के साथ -

शकुंतला कालरा

प्रार्थना और मंत्र

डॉ. अर्चना प्रकाश
स्वतंत्र लेखन
लखनऊ, उ.प्र.

यह मानव स्वभाव है कि जो भी वस्तु या व्यक्ति अत्यंत शक्तिशाली रहस्यमय एवम उपयोगी होते हैं, उन्हें वह पूजनीय बना देता है। ईश्वर क्या है? परा शक्ति क्या है यह विश्लेषण बड़े बड़े सन्त महात्मा भी पूरी तरह नहीं कर पाएं हैं। सभी के अपने अलग अलग अनुभव व ज्ञान धाराएं हैं। वस्तुतः इसीलिए ईश्वर की पूजा होती है। इसी तरह जिन प्रकृतिस्थ वस्तुओं की शक्ति सदा से ही रहस्य है एवम उपयोगिता अत्यधिक है जैसे सूरज, चाँद, पृथ्वी, अग्नि जल व वायु आदि, उसे भी पूजनीय मान लिया जाता है। इसी तरह जो मानव अद्वितीय शक्तियों से परिपूर्ण होते हैं, एवम संसार मे सभी को लाभ देते हैं, वे भी पूजनीय हो जाते हैं। इस क्रम में जो मनुष्य जितनी अधिक लाभ वर्षा कर सकते हैं वे उतने ही अधिक पूजनीय हो जाते हैं। जैसे गौतमबुद्ध स्वामी विवेकानंद, महर्षि वाल्मीकि, राम कृष्ण परमहंस आदि। पूजन का प्रथम सोपान प्रार्थना ही है। प्रार्थना कभी भी कहीं भी किसी भी भाषा, शब्द या भाव में की जा सकती है। प्रायः देखा गया है कि बालपन से ही मनुष्य घोर संकट में हो, सर्वथा असहाय हो अथवा अन्य कोई भयावह स्थिति में हो तो वह स्वयमेव ही ईश्वर को पुकार उठता है। 'हे ईश्वर! मदद कर' ये पुकार सिर्फ सहायता व संरक्षण के लिए होती है, किंतु इसका ये अर्थ कदापि न लें कि आसन्न संकट के बिना प्रार्थना नहीं कि जा सकती है। ये तो मात्र एक परिस्थिति है जिसमे प्रार्थना स्वतः स्फूर्त होती है। प्रार्थना मन के भावों की सीधी सरल गद्य व पद्यमय भाषा हो सकती है कभी कभी ये सरल काव्यमय अभिव्यक्ति भी होती है जैसे कबीर व सूरदास ने की थी। प्रार्थना विभिन्न देवी देवताओं जैसे–दुर्गा, लक्ष्मी, शारदा शिव, इंद्र, विष्णु, हनुमान आदि की की जाती है। प्रार्थना में अपने इष्टदेव को प्रसन्न करने के लिए अनुनय विनय की जाती है, अनुरोध किया जाता है या कुछ मांगने के लिए आग्रह किया जाता है। कई बार प्रार्थी अपने दुष्कर्मों के लिए क्षमा भी मांगते हैं, या प्रायश्चित करने के लिए दृढ़ संकल्प भी लेते हैं। किसी भी देवी देवता की प्रार्थना में भाषा या शब्दों का बंधन नहीं होता। किंतु भावना की प्रबलता अवश्य होती है। उद्वेलित विचलित मन की शांति का सबसे सरल व सुगम मार्ग प्रार्थना ही है। ज्ञानी सिद्ध व जानकार व्यक्ति प्रार्थना के साथ मंत्र या मन्त्रो का प्रयोग भी करते हैं।

प्रार्थना मूल रूप से मौखिक, मुखर व मानसिक होती है। जिसमें आराधना, पश्चाताप, धन्यवाद व विनती होती है। प्रभु की स्तुति और प्रार्थना भक्ति का प्रथम चरण है। जब कि मंत्र जाप व ध्यान अंतिम चरण है। जैसे छत पर चढ़ने के लिए सीढ़ियों की जरूरत होती है वैसे ही भक्ति में स्तुति प्रार्थना, मंत्र जप व ध्यान आवश्यक तत्व होते हैं जहाँ प्रार्थना जीवन में मनचाहे वरदान पाने की इच्छा को साकार करने के लिए परमात्मा के शरणागत होने की प्रक्रिया है तो मंत्र के साथ ध्यान प्रार्थना का दूसरा चरण है।

ईश्वर से अपने मन व हृदय की बात कहना प्रार्थना है तो मंत्र ध्यान और जप भी प्रार्थना के अभिन्न रूप हैं। प्रार्थना हमें बल देती है सम्बल दे कर पवित्र भी बनाती है। प्रार्थनाएँ हीलिंग टच का काम भी करती हैं। प्रार्थना का वैदिक वेदान्तिक व सर्वथा बौद्धिक स्वरूप मंत्र है। मंत्र दुरूह सरल, दीर्घ व लघु अनेक प्रकार के होते हैं। सभी मन्त्रो की भाषा संस्कृत या वैदिक होती है। विशिष्ट उद्देश्यों की पूर्ति के लिए विशिष्ट मन्त्रो के प्रयोग किये जाते हैं। सभी देवताओं के अलग मंत्र होते हैं। इसके साथ ही विभिन्न प्रयोजनों के भी अलग मंत्र होते हैं। मन्त्रो में प्रत्येक वर्ण के उच्चारण के भी अलग विधान होते हैं। किसी भी मंत्र का विधिपूर्वक नियत संख्या में अनेकशः उच्चारण करने से वह जाप बन जाता है। दुरूह एवम दुसाध्य कार्य सिद्ध करने के लिए विधि विधान पूर्वक नियत संख्या में जप जैसे सवा लाख ग्यारह हजार या कम से कम एक सौ आठ बार उस मंत्र को उच्चारित किया जाता है, जिसे जप कहते हैं। निष्काम भक्ति भावना से प्रबल भावना के साथ किसी भी मंत्र का प्रतिदिन नियमित नियत समय पर जाप करने से वह मंत्र संस्कार बन जाता है और आत्मा से देवता का भेद करने वाले आवरण हट जाते हैं। साधक की आध्यात्मिक शक्तियां जागृत हो जाती हैं और साधक का तन मन दैवीय हो जाता है। मंत्र सिद्धि का अर्थ है किसी एक मंत्र का प्रभावशाली बनना। जिस भक्त या साधक को मंत्र सिद्धि हो जाती है उसे सिद्ध पुरुष या मंत्र सिद्ध साधक कहते हैं। किसी भी मंत्र को सिर्फ शब्द या रचना कहना गलत है। प्रत्येक मंत्र में अद्वितीय व अद्भुत शक्तियां निहित होती हैं, जो उस मंत्र का विधिवत जाप करने पर प्रगट होती हैं। मंत्र जप के प्रभाव से व्यक्ति का व्यक्तित्व व तन मन सभी उस मंत्र से संस्कारित व दिव्य हो जाते हैं। मंत्र जप एक विज्ञान की तरह होता है, क्यों कि मंत्र के हर शब्द में एक प्रचंड शक्ति होती है। मंत्र मुख्यतः तीन प्रकार के होते हैं–सात्विक, तांत्रिक, व शाबर मंत्र। सभी मन्त्रो का अपना अलग महत्व व प्रभाव परिणाम होते हैं। मंत्रोच्चारण से पूर्व एवम मंत्रोच्चारण के पश्चात प्रार्थना अवश्य की जाती है। मनुष्य जीवन मे सुख शांति वैभव, व सदाचरण यश मान सभी कुछ इष्टदेव की नियमित प्रार्थना व मंत्र जाप के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है।

संदर्भ –
1,आख्यान बी एच यू –डॉ. रवि श्रीवास्तव। 2015
2,विश्वकोश पञ्चाङ्ग, अक्तूबर 20223
3,हिंदुस्तान टाइम्स, अगस्त 2022
4,न्यूज ट्रैक, जुलाई 2022।

नव वर्ष के दोहे

प्रो. डॉ. शरद नारायण खरे
प्राचार्य
शासकीय जेएमसी महिला महाविद्यालय
मंडला (म.प्र.)

सूरज आया इक नया, गाने मंगल गीत।
प्रियवर अब दिल में सजे, केवल नूतन जीत।।

उसकी ही बस हार है, जो माना है हार।
साहस वाले का सदा, विजय करे श्रंगार।।

बीते के सँग छोड़ दो, मायूसी–अवसाद।
नवल बनेगा अब धवल, देगा मधुरिम याद।।

खट्टी–मीठी लोरियां, देकर गया अतीत।
वह भी था अपना कभी, था प्यारा सा मीत।।

जाते–जाते वर्ष यह,करता जाता नेह।
अंतर इसका जनवरी,भले दिसंबर देह।।

फिर से नव संकल्प हो, फिर से हो उत्थान।
फिर से अब जयघोष हो, हो फिर से नव गान।।

नया सूर्य ले आ गया, नया शौर्य, नव ताप।
लिये आप आवेग यदि, नहीं बनोगे भाप।।

नहीं शिथिलता हो कभी, नहीं चरण हों मंद।
गिरकर फिर आगे बढ़ो, काम नहीं हो बंद।।

एक जनवरी आ रही, सभी लिये उत्साह।
बात तभी बन पायगी, बनो वक्त के शाह।।

दोस्त, मित्र, बंधू, सखा, रक्खो सँग नववर्ष।
मिले तुम्हें खुशियां 'शरद', मिले सुखद नव हर्ष।।

वैश्विक परिदृश्य में राष्ट्रभाषा हिन्दी...

मातृभाषा के ममत्व, राजभाषा के एकत्व और राष्ट्रभाषा के समत्व द्वारा भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं राष्ट्रीयता की पुनर्स्थापना

डॉ. अजय शुक्ला
गोल्ड मेडलिस्ट इंटरनेशनल ह्यूमन राइट्स मिलेनियम अवार्ड
डायरेक्टर, स्प्रीचुअल रिसर्च स्टडी एंड एजुकेशनल ट्रेनिंग सेंटर
देवास, मध्य प्रदेश

" राष्ट्र धर्म के निर्वहन में – ' जय हिंद ... जय हिंदी ... जय भारत ... ' की व्यावहारिक अनुमोदना का शंखनाद – उत्तिष्ठ भारतः मां भारती पुकारती , के आह्वान में – ' सात्विक चेतना के दायित्वबोध द्वारा जिम्मेदारी और जवाबदेही के क्रियान्वयन...' से सुनिश्चित किया जाना अनिवार्य है जिसमें राष्ट्रभाषा हिंदी के माध्यम से राष्ट्रीयता की पुनर्स्थापना को सुनिश्चित करते हुए – ' स्वतंत्र मानसिकता में आजादी का मर्यादित जश्न...' अवश्य ही मनाया जा सकता है ।

भारत माता के प्रति जीवंत नैतिक चौतन्यता का व्यापक परिदृश्य सदा ही – ' राष्ट्र गौरव हिंदी भाषा की प्राण प्रतिष्ठा...' हेतु तत्पर रहता है जिसमें परंपरागत गुणात्मक विकास में नवीनतम व्यावहारिक प्रयोग विशिष्ट भूमिका निभाते हुए – ' भारतीय जनमानस में रची – बसी , राष्ट्रभाषा हिंदी को संपूर्ण त्याग , तपस्या एवं बलिदान...' की दीर्घकालीन प्रक्रिया के पश्चात अंततः आदर एवं सम्मान के ' पवित्रतम प्रतिष्ठित स्वरूप में अधिकार एवं कर्तव्य के श्रेष्ठतम सामंजस्य...' द्वारा प्राप्त करने की उच्चतम अभिलाषा रखते हैं ।

जागृत राजनीतिक इच्छाशक्ति का अदम्य साहस ही – ' राजपथ पर विराजित राष्ट्रभाषा हिंदी को कर्तव्यपथ के स्वतंत्र स्वरूप...' में स्थापित कर सकता है जिसमें राष्ट्रभाषा हिंदी की उद्घोषणा के मौलिक आयाम ' विकसित भारत के निर्माण में राष्ट्रभाषा के जयघोष को भारतीय आत्मा की विहंगम संकल्पना...' के स्वरूप में स्वीकार करते हैं ।

विश्व में राष्ट्रभाषा हिंदी द्वारा गौरवान्वित भारतीयता.... ' सर्वे भवंतु सुखिनः ...' की विशालता को आत्मिक जगत में सुसज्जित करके जब राष्ट्रभाषा हिंदी से निर्मित सृजनात्मक दृष्टिगत – नवदृष्टि द्वारा जगत गुरु के रूप में – ' वसुधैव कुटुंबकम...' का मंगलकारी स्वरूप अभिव्यक्त करता है तब भारतीय आत्मगत संचेतना की सहभागिता – ' वैश्विक परिदृश्य में राष्ट्रभाषा हिंदी : मातृभाषा के ममत्व , राजभाषा के एकत्व और राष्ट्रभाषा के समत्व द्वारा भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं राष्ट्रीयता की पुनर्स्थापना ' का प्रतिपादन महत्वपूर्ण हो जाता है ।

राष्ट्रभाषा हिंदी द्वारा राष्ट्रीयता की स्थाई पुनर्स्थापना : वैश्विक जगत के मध्य भारत राष्ट्र की समृद्धशाली – अतीत , आगत एवं अनंत के संदर्भ एवं प्रसंग में जीवित जिजीविषा की जीवंत कर्तव्योन्मुखी मानवीय प्रवृत्ति जिसमें – मनुष्य , मनुष्यता और संवेदनशीलता की प्रासंगिकता को स्वीकार करते हुए राष्ट्रीय प्रतिबद्धता का विराट शंखनाद – भारत की स्वतंत्रता के 75 वीं वर्षगांठ अर्थात भारत की आजादी का अमृत महोत्सव के श्रेष्ठतम एवं महानतम अवसर पर – राष्ट्रभाषा हिंदी की उद्घोषणा के शुभ , पवित्र और न्याय संगत

स्वरूप के द्वारा ही सुनिश्चित किया जा सकता है जिसमें ' मातृभाषा , राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा के ममत्व , एकत्व और समत्व द्वारा भारतीय सभ्यता , संस्कृति तथा राष्ट्रीयता की स्थाई रूप में पुनर्स्थापना ' से भारत को – " विश्व गुरु " बनाने की संकल्पना का वास्तविक यथार्थ पूर्णतया समाहित रहता है ।

स्वतंत्र मानसिकता में आजादी का मर्यादित जश्न : ' सारे जहां से अच्छा हिंदुस्तान हमारा...' का सैद्धांतिक एवं व्यावहारिक पक्ष संपूर्ण भारतीय जनमानस के भावनात्मक परिदृश्य और विचारगत परिवेश से संबद्ध हो जाने के कारण – 'भारतीय आत्मा द्वारा स्वतंत्र मानसिकता में आजादी का मर्यादित जश्न...' मनाने की दीर्घकालीन आशा से भरपूर विश्वसनीय आवश्यकता की अपेक्षित अभिलाषा से युक्त – 'राष्ट्रवाद की मूलभूत संकल्पना...' के सानिध्य में पुष्पित और पल्लवित – सृजनात्मक , संवेदनशील अभिव्यक्ति के माध्यम से विकसित भारत के निर्माण का रहस्यवादी, सकारात्मक तथा सार्थकता की दृष्टि से संपूर्ण रुप से समृद्ध दृष्टिकोण के व्यावहारिक क्रियान्वयन का उज्जवल स्वरूप –' राष्ट्रभाषा हिंदी की प्राण प्रतिष्ठा...' को व्यवस्थागत निर्णयात्मक गतिविधि के माध्यम से स्थापित करने की आत्मगत चेतना , आज भी प्रतीक्षारत है ।

भारत माता के प्रति जीवंत नैतिक चौतन्यता : विश्व मानवता के समग्र उत्थान एवं निरंतर उन्नयन में भारतीयता की अवधारणा सदा ही – 'आत्मगत चेतना द्वारा आंतरिक अभिप्रेरणा...' से सर्व मानव आत्माओं के अंतरसंबंधों में नैसर्गिक जुड़ाव को भाषाई सुचिता की महत्वपूर्ण भूमिका से संबंध करके – 'भारत माता के प्रति जीवंत नैतिक चौतन्यता...' को शुद्ध एवं सुदृढ़ स्वरूप में निर्मित करते हुए संपूर्ण जगत को धर्म एवं कर्म का पाठ पढ़ाकर जीवात्मा को अध्यात्म और पुरुषार्थ का संबल प्रदान करके, राजयोग तथा मौन की निःशब्दता को भी अंततः आत्मिक पवित्रता के स्वरूप में 'अध्यात्म – विश्व के मनुष्यों का धर्म...' बन जाने के लिए समदृष्टि से परिपूर्ण आत्मीय संबोधन की चेतना युक्त सृष्टि , जिसके अंतर्गत सम्मिलित – ' विश्व शांति एवं सामाजिक समरसता...' को स्थाई रूप से स्थापित करने के अग्रदूत बनकर, भारतीय आत्मा ने मानवता के मानस को संस्कारित चेतना से संपन्न तथा दिव्य गुणों एवं शक्तियों द्वारा सुरुचिपूर्ण ढंग से सुसज्जित कर दिया है ।

राष्ट्र गौरव हिंदी भाषा की प्राण प्रतिष्ठा : भारत राष्ट्र में हिंदी भाषा को राष्ट्रभाषा के स्वरूप में लोकतांत्रिक व्यवस्था के अंतर्गत कानूनी रूप से लागू करने के लिए 'समस्त भगीरथ प्रयास की श्रम साध्य गौरवमई स्वर्णिम इबारत एक शताब्दी से भी अधिक ऐतिहासिक एवं पौराणिक धर्म ग्रंथों से सृजित विकास...' यात्रा के संदर्भ और प्रसंग के जीवंत रूप से उपलब्धि की पूर्णता के साथ स्वयं सिद्धा की प्रतिमूर्ति बनकर ' राष्ट्र गौरव के रूप में हिंदी भाषा की प्राण प्रतिष्ठा...' की बाट जोहने में संलग्न है और राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रभाषा की बोधगम्यता के साथ ' राजभाषा अर्थात राजपथ से कर्तव्यपथ का अनुकरण तथा अनुसरण...' करके यथाशीघ्र राष्ट्रभाषा हिंदी के आरंभ से अंततः तक की ' विकास से विकसित स्वरूप की यात्रा...' में भाषाई गुलामी की अंतरकथा में उलझी हिंदी भाषा की व्यथा , स्वयं की ही स्वतंत्रता हेतु नित– नूतन , अनेकानेक विधि – विधान के अनुप्रयोग से मुक्ति की मन्नत में अस्तित्व की स्थापना का वास्तविक यथार्थ अनवरत रूप से यदा – कदा विभिन्न स्थितियों एवं परिस्थितियों के अंतर्गत ढूंढ रही है।

परंपरागत गुणात्मक विकास में नवीनतम व्यावहारिक प्रयोग : राष्ट्रभाषा हिंदी के संपूर्ण विकास के अनुक्रम में सभी विधाओं के अंतर्गत ' अंतःकरण की शक्ति का पूर्ण विनियोजन, संपूर्ण मनोयोग...' द्वारा पुरातन काल से वर्तमान आधुनिक काल की व्यवस्थागत प्रणाली में परंपरागत गुणात्मक सहभागिता के द्वारा ' शासकीय , अशासकीय संस्थाओं के साथ – साथ गैर सरकारी एवं स्वैच्छिक संगठनों...' के माध्यम से भारत के विभिन्न प्रांतों में राष्ट्र भाषा की उन्नति हेतु नवीनतम व्यावहारिक प्रयोग के प्रमाणिक दस्तावेज का निर्माण एवं प्रचार – प्रसार किया गया और बहुआयामी स्थितियों में सुदृढ़ और सशक्त तरीके से प्रभावशाली तथा प्रेरणादाई हिंदी के प्रकाशन को – दैनिक , साप्ताहिक , पाक्षिक , मासिक , द्विमासिक , त्रैमासिक , चौमासा , छमाही , वार्षिकी , विशिष्ट सामाजिक पृष्ठभूमि से संबंधित विभिन्न लोक कल्याणकारी अवसर एवं राष्ट्रीय – अंतराष्ट्रीय महत्वपूर्ण उपयोगी मुद्दों पर विभिन्न – विशेषांक , संस्थागत गतिविधियों के ब्योरे हेतु प्रस्तुत की जाने वाली – स्मारिका , साहित्यिक गतिविधियों के सामूहिक प्रस्तुतीकरण हेतु साझा संकलन, के गद्य एवं पद्य विशेषांक तथा पुस्तकाकार स्वरूप में संदर्भ ग्रंथों को विश्व स्तरीय विराट एवं विशाल स्वरूप तक आदर और सम्मानपूर्ण विधि – विधान से पहुंचाया गया है जिसमें ' मर्यादित संप्रेषण और व्यापक सामाजिक स्वीकारोक्ति की उच्चतम अवस्था से संबंधित व्यवस्था...' भी गतिशीलता की प्रासंगिकता में निरंतर प्राप्त होती रही है जिससे राष्ट्रभाषा हिंदी में सृजनात्मक गतिविधियों का कुशलता से संपादन एवं दैनिक जीवन में उपयोग करने के अतिरिक्त नित्य – नूतन विधियों के व्यावहारिक क्रियाकलापों का क्रियान्वयन भी अति महत्वपूर्ण सिद्ध होता रहा है जिन्हें आत्मसात करने से राष्ट्रभाषा हिंदी को स्थापित होने में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष अर्थात सतत रूप से नवाचारी प्रासंगिकता में मदद प्राप्त होती रही है ।

भारतीय जनमानस में रची बसी राष्ट्रभाषा हिंदी : भारतीयता की मौलिक चिंतनशीलता सदैव चेतना के द्वारा राष्ट्रभाषा की आरंभिक स्थितियों में हिंदी की आवश्यकता से लेकर उपयोगिता को चुनौतीपूर्ण रूप से स्वीकार करते हुए 'जहां सुमति तहां संपत्ति नाना..' के माध्यम से सात्विक गुणात्मकता के अनुक्रम में अभिव्यक्ति की ' स्वतंत्रता को मानस पटल द्वारा अंगीकार करके...' संपूर्ण व्यक्तित्व विकास की अवधारणा को व्यवहारिकता की कसौटी पर जीने के लिए सहज ही तत्पर हो जाना , इस बात का प्रमाण है कि 'राष्ट्रभाषा हिंदी को रोजगार से जोड़ने...' की प्रक्रिया का अनुगमन करके 'हिंदी बोलें एक होलें...' की प्रासंगिकता से आपसी संवाद द्वारा एक दूसरे से जुड़ जाने की विभिन्न स्थितियां भारत राष्ट्र में 'अनेकता में एकता अर्थात एक भारत श्रेष्ठ भारत...' के उच्चतम स्वरूप के अंतर्गत निर्मित हुई है जो भारतीय जनमानस द्वारा शासकीय , अशासकीय , व्यावसायिक , स्वैच्छिक एवं गैर सरकारी

संगठनों में भी राष्ट्रभाषा से संबंधित कार्यों की विधिवत रूप से की जाने वाली पूर्ण संपन्नता , उपलब्धिपूर्ण सफलता के रूप में प्राप्त हो सकी है।

विश्व में राष्ट्रभाषा हिंदी द्वारा गौरवान्वित भारतीयता : ' सत्यमेव जयते...' की समग्रता के विराट स्वरूप में भारत की स्वतंत्रता के 75 वीं वर्षगांठ अर्थात भारत की आजादी का अमृत महोत्सव के महान अवसर पर संपूर्ण विश्व में 'भारतीयता का परचम लहराने हेतु सर्वश्रेष्ठ उपाय राष्ट्र के साहित्य सर्जको द्वारा स्वयं को भारतीय ज्ञान परंपरा...' की समृद्धशाली धरोहर से शिक्षित – दीक्षित करते हुए चिंतनशील प्रक्रिया द्वारा अनुभवी बनकर भावनात्मक एवं वैचारिक प्रज्ञा में दक्षता रुपी सक्षमता से 'सूक्ष्म कल्पनाशीलता का प्रयोग करके सृजनात्मक साहित्य का सृजन जो हिंदी का प्राण जगत...' है उसमें नवाचारी के प्रयोग से आधुनिक काल की विरासत को ईमानदारी से सुसज्जित करके ' अतीत , आगत एवं अनंत की सृजनशील साहित्यिक विरासत के प्रति समादर भाव की पृष्ठभूमि में कल्याणकारी और मंगलकारी...' साहित्य सृजन अनवरत स्वरूप से गतिशील है इसलिए 'उत्तिष्ठ भारतरू मां भारती पुकारती : सात्विक चेतना के दायित्वबोध द्वारा जिम्मेदारी और जवाबदेही से क्रियान्वयन...' के आह्वान को 'भारत राष्ट्र के नायकों द्वारा राजपथ के राजसिक स्वरूप से कर्तव्यपथ के सात्विक प्रांगण...' में पधारकर 'राष्ट्रीय हिंदी दिवस, के महान अवसर पर 'राष्ट्रभाषा हिंदी को संपूर्ण भारतवर्ष में भारतीय संविधान के अनुसार कानूनी रूप से लागू करने की उद्घोषणा...' किया जाना परम आवश्यक है जिसमें 'भारत राष्ट्र को विकसित भारत बनाने का महान लक्ष्य समस्त भारत के जनमानस की दृढ़ संकल्पबद्धता...' की परिणिति है जो भारत की विराट दिव्य दृष्टि के रूप में भारत को विश्व गुरु बनाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है इसलिए 'भारतीय आत्मा द्वारा, सबका साथ, सबका विकास, सबका विश्वास, की संपूर्णता के साथ – साथ, राजनीतिक इच्छाशक्ति से भरपूर साहस द्वारा केवल एक अंतिम अधिसूचना के माध्यम से भारत माता के, सच्चे सपूत का सबूत राष्ट्रभाषा हिंदी को लागू...' करके ही दिया जा सकता है।

राष्ट्रभाषा हिंदी से निर्मित सृजनात्मक सृष्टिगत नवदृष्टि : हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने हेतु 'संपूर्ण भारतवर्ष की हिंदी संस्थाओं और उनसे संबंधित विभिन्न सामाजिक, मनोवैज्ञानिक, दार्शनिक, धार्मिक, आध्यात्मिक क्षेत्र के साथ – साथ भारत की ज्ञान परंपरा से संबंधित विज्ञान, तकनीकी, कला एवं वाणिज्य, अभियांत्रिकी, शारीरिक एवं मानसिक स्वास्थ्य, के स्वरूप में भी राष्ट्रभाषा हिंदी के द्वारा विभिन्न क्षेत्र के साथ, लगभग सभी विधाओं के अंतर्गत साहित्य निर्माण की निरंतरता के 75 वर्षों के संघर्ष और विकास के माध्यम से विकसित हो जाने की प्रक्रिया में 'योगदान की गौरव गाथा को संदर्भ एवं प्रसंग के विशाल स्वरूप में संज्ञान लेकर हिंदी दिवस के महान अवसर पर सूरज की प्रातः किरण के साथ भारतवर्ष में राष्ट्रभाषा हिंदी कानूनी रूप से लागू हो गई है...' की सुखद अनुभूति का समाचार संप्रेषित होने से जब 'भारतीयता की महत्वपूर्ण पहचान निज भाषा उन्नति...' के संदर्भ और प्रसंग में स्थापित हो जाती है तब 'संपूर्ण विश्व में व्याप्त भारतीय जन समूह राष्ट्र गौरव गान से आनंदित हो उठेगा क्योंकि भारत की राष्ट्रभाषा हिंदी...' आज राष्ट्रीय हिंदी दिवस , से भारतीय संसदीय व्यवस्था से उद्घोषित एवं कानूनी रुप से निर्धारित होकर राष्ट्रभाषा हिंदी भारत में पूर्णतः निर्मित, स्थापित एवं विकसित होने के मार्ग पर गतिमान हो गई है जो 'मातृभाषा, राजभाषा एवं राष्ट्रभाषा के ममत्व, एकत्व और समत्व द्वारा भारतीय सभ्यता, संस्कृति तथा राष्ट्रीयता की पुनर्स्थापना ' का संवाहक बनकर संपूर्ण शताब्दी की महायात्रा में अनवरत रूप से गतिशील थी भी, है भी, और भविष्य में भी, विकास का यह गुणात्मक अनुक्रम बना रहेगा।

भारतीय परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रभाषा हिंदी की सहभागिता : भारतीय परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रभाषा हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में लागू कराने के लिए अर्थात राष्ट्र ऋण के प्रति व्यक्तिगत एवं सामूहिक आहुति प्रदान करने हेतु स्वयं को संपूर्ण समर्पण करने की, प्राण–प्रण से न्योछावर होने की संकल्पना का यथार्थ बनकर भारतीय आत्मा के आम जनमानस से संबद्ध राष्ट्रीय चरित्र के प्रति महानतम दृष्टि और विराट दृष्टिकोण के साथ 'अखिल भारतीय स्तर का सानिध्य और विश्व स्वरूप के अंतर्गत विगत 75 वर्षों से राष्ट्रभाषा की समृद्धिशाली अवधारणा के मूलभूत उद्देश राष्ट्रभाषा हिंदी के साथ – साथ सभी भारतीय भाषाओं के मध्य आपसी सामंजस्य, समन्वय, समरसता, एकता, एवं गुणात्मक विकास...' के मूल मंत्र द्वारा राष्ट्रभाषा हिंदी के विकास हेतु समर्पित मनोभाव से आत्मगत संलग्नता के साथ गतिशील है ... ।

संपूर्ण भारत वर्ष के अंतर्गत लगभग सभी प्रांतों में शासकीय शासकीय एवं गैर शासकीय व्यवस्थाओं की संपूर्णता के माध्यम से समस्त महत्वपूर्ण विषय और उनसे जुड़े विविध आयाम की 'सबल, सक्रिय एवं समर्थ सहभागिता द्वारा राष्ट्रभाषा हिंदी को अपने ही राष्ट्र में कानूनी रुप से लागू कराने हेतु 'संपूर्ण संपूर्ण भारतीय जनमानस की विशाल परिदृश्य से संबंधित श्रेष्ठतम कल्पना, प्रयास और अनुभूति से संबंधित अकादमिक, व्यवसायिक, तकनीकी एवं अनुसंधानपरक सहभागिता और उसका विशिष्ट आयाम राष्ट्रीय और अंतरराष्ट्रीय जगत की महत्वपूर्ण भूमिका का संपूर्ण योगदान राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में दृढ़ संकल्पित मनोभाव से प्रतिबद्धता के साथ समर्पित एवं प्रेरणादाई स्वरूप में सदा ही विद्यमान रहते हुए गतिशील बना हुआ है... ।

अतः राष्ट्र भाषा हिंदी की सम्मानित स्थिति और गौरवान्वित स्वरूप 'विश्व समुदाय के मध्य, वसुधैव कुटुंबकम से मुखरित ममत्व, एवं भारत की आजादी के अमृत महोत्सव द्वारा उत्पन्न एकत्व, और विश्व हिंदी दिवस में सन्निहित समत्व, के माध्यम से भारतीय सभ्यता, संस्कृति एवं राष्ट्रीयता की पुनर्स्थापना...' में प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से संलग्न संपूर्ण भारतीय मानव आत्माओं के साथ–साथ समस्त देशवासियों और वैश्विक परिदृश्य में विराजमान राष्ट्रभाषा हिंदी की सेवा में समर्पित आत्मीयता से युक्त मनोभाव को विश्व हिंदी दिवस के महान गौरवमई अवसर पर अनेकानेक शुभकामनाएं ... एवं... हार्दिक... आत्मिक... बधाई... , जय हिंद ... जय हिंदी ... जय भारत ...।

स्वामी विवेकानंद - व्यक्तित्व जो अमर हो गया

डॉ. हनुमान प्रसाद उत्तम
स्वतंत्र लेखन
योग. प्राकृतिक चिकित्सा विशेषज्ञ
(आयुर्वेद रत्न)
कानपुर नगर, उत्तर प्रदेश

भारत के गौरव पुरुष स्वामी विवेकानंद का जन्म कोलकत्ता में 12 जनवरी, 1863 को पवित्र संक्रांति के दिन हुआ था। कोलकत्ता के प्रसिद्ध वकील विश्वनाथ दत्त उनके पिता थे। उनकी माता भुवनेश्वरी देवी अत्यंत सुरुचि सम्पन्न और अभिजात महिला थीं। विवेकानंद के बचपन का नाम नरेन्द्र नाथ था। बचपन में वे नटखट एवं फुर्तीले थे। उनका अध्ययन–पठन अनोखा था। ग्रहण क्षमता अपूर्व थी। स्मरण शक्ति विलक्षण थी। आयु की तुलना में विवेक शक्ति भी अलौकिक थी।

नरेन्द्रनाथ विचारशील व्यक्ति थे। ईश्वर विषयक समस्या उन्हें सता रही थी। कुशाग्र बुद्धि होने के कारण वे किसी भी बात पर विश्वास करने से पहले ही उसका प्रमाण चाहते थे। ईश्वर की खोज में वे जगह–जगह भटकते रहे, लेकिन उन्हें कहीं भी समाधान नहीं मिला। ईश्वर के अस्तित्व के संदर्भ में वे निराश हो गए और सोचने लगे कि क्या ईश्वर केवल पागलों की कल्पना है? ठीक ऐसे समय नियति उन्हें कृपापूर्वक धर्म निरपेक्षता के अग्रदूत रामकृष्ण परमहंस के सानिध्य में ले गई। नरेन्द्रनाथ ने रामकृष्ण परमहंस से पूछा, ''क्या आपने ईश्वर को देखा है?'' रामकृष्ण ने मुस्कराकर जवाब दिया, ''हां, मैंने ईश्वर को देखा है तथा तुम्हें भी ईश्वर के दर्शन करवा सकता हूं।'' इस प्रकार नरेन्द्रनाथ को रामकृष्ण के रुप में उद्धारकर्ता सद्गुरु प्राप्त हुआ। करीब पांच वर्ष तक रामकृष्ण के सानिध्य में रहे। इस दौरान रामकृष्ण ने नरेन्द्र को योग्य शिक्षा दी। तीव्र साधना के बल पर नरेन्द्रनाथ ने इस अल्पकाल में ही रामकृष्ण से दिव्यज्ञान प्राप्त कर लिया और उनके संदेशवाहक बन गए।

16 अगस्त, 1886 को मध्यरात्रि में रामकृष्ण महासमाधि में लीन हो गए। उस समय नरेन्द्र की आयु 23 वर्ष थी। रामकृष्ण द्वारा सौंपे गए कार्य को निभाने का उत्तरदायित्व उन पर आ गया था। उन्होंने अपना घर त्याग दिया और वे स्वामी विवेकानंद बन गए। गुरु भाइयों के साथ रहकर तपस्या करने के लिए उन्होंने एक मठ की स्थापना की। भारत के उत्तर छोर से दक्षिण छोर तक हिमालय से कन्याकुमारी तक उन्होंने पैदल यात्रा की।

''उत्तिष्ठत जाग्रत प्राप्य वरान्निबोधत'' इन शब्दों के साथ स्वामी विवेकानंद ने युवाओं को ललकार कर कहा था, ''उठो, जागो तथा तब तक संघर्ष करो जब तक कि तुम्हें लक्ष्य हासिल नहीं हो जाए।'' वास्तव में स्वामी विवेकानंद आधुनिक मानव के आदर्श प्रतिनिधि हैं। खासतौर से भारतीय युवाओं के लिए स्वामी विवेकानंद से बढ़कर दूसरा कोई प्रतिनिधि नहीं हो सकता। पं. जवाहर लाल नेहरु ने स्वामी जी के प्रति श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए कहा था, ''मैं नहीं जानता कि हमारी युवा पीढ़ी में कितने लोग स्वामी जी के भाषणों तथा लेखों को पढ़ते हैं, लेकिन मैं उन्हें यह निश्चित रुप से बता सकता हूं कि मेरी पीढ़ी के बहुतेरे युवक

उनसे अत्यधिक प्रभावित हुए हैं। यदि तुम स्वामी जी के भाषणों तथा लेखों को पढ़ों, तो तुम्हें एक अद्भुत बात दिखाई देगी कि वे कभी पुराने प्रतीत नहीं होते।'' गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी कहा था, ''यदि आप भारत को समझना चाहते हो, तो विवेकानंद का अध्ययन कीजिए। उनमें सब-कुछ सकारात्मक है, नकारात्मक कुछ भी नहीं---।''

स्वामी जी की सबसे बड़ी खासियत उनका ओजपूर्ण स्वर था, जिससे श्रोता मंत्रमुग्ध हो जाते थे। ब्रिटिशकालीन शिक्षा पद्धति पर रोष व्यक्त करते हुए स्वामी जी ने कहा था, ''सबसे पहली बात तो यह हे कि यह शिक्षा मानव बनाने वाली नहीं कही जा सकती। यह शिक्षा मात्र निषेधात्मक है। निषेधात्मक शिक्षा अथवा निषेध की बुनियाद पर आधारित शिक्षा मृत्यु से भी विकराल है।''

उनका विचार था कि, 'जिस शिक्षा से हम अपना जीवन निर्माण कर सकें, चरित्र गठन कर सकें, वही वास्तव में शिक्षा कहलाने लायक है।' शिक्षित भारतीयों को लताड़ते हुए स्वामी जी कहते हैं कि, ''जब तक करोड़ों लोग भूख और अज्ञानता से पीड़ित हैं, तब तक मैं उस प्रत्येक व्यक्ति को देशद्रोही समझूंगा, जो उनके खर्च से शिक्षित तो बन गया, लेकिन तब अब उनके प्रति जरा भी ध्यान नहीं देता।''

धर्म को उसके सच्चे अर्थों में विवेकानंद ने ही जाना और समझा था और इसी कारण उन्होंने वेदांत को आधार मानते हुए विश्वधर्म की कल्पना की थी। धर्म पर अपने विचार प्रकट करते हुए स्वामी जी ने 11 सितम्बर, 1893 को शिकागो की 'धर्म संसद' में कहा था, ''मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने का गर्व अनुभव करता हूं, जिसने संसार को सहिष्णुता और सार्वभौमिक स्वीकृति दोनों की शिक्षा प्रदान की है। हम लोग सभी धर्मो के प्रति सहिष्णुता में ही विश्वास नहीं करते, अपितु सारे धर्मों को सच्चा मानकर स्वीकार करते हैं।'' स्वामी जी अनेक धर्मो की एकता के प्रबल समर्थक थे। शिकागो में ही उन्होंने कहा था कि, ''शीघ्र ही सारे प्रतिरोधों के बावजूद प्रत्येक धर्म की पताका पर यह लिखा होगा-सहायता करो, लड़ो मत, परभाव ग्रहण न कि परभाव विनाश, समन्वय और शांति न कि मतभेद और कलह।''

1893 के विश्वधर्म सम्मेलन के आयोजकों ने आशा व्यक्त की थी कि इससे संसार में समभाव और सहमति का प्रसार होगा, लेकिन वैसा हुआ नहीं तथा ऐसा ही कुछ है स्वामी विवेकानंद की उन उम्मीदों का हुआ, जो उन्होंने भारत के आध्यात्मिक, नैतिक और सांस्कृतिक विकास के संदर्भ में की थी। विवेकानंद का मानना था कि भारत यदि परमात्मा की खोज में लगा रहता है, तो वह कभी नहीं मिट सकता, लेकिन राजनीति और समाज संघर्ष में पड़ता है, तो नष्ट हो जाएगा। विवेकानंद ने मद्रास के शिष्यों को सम्बोधित अपने एक पत्र में लिखा था, ''मेरी सर्वोच्च अभिलाषा यही है कि एक ऐसा चक्र प्रवर्तन कर दूं, जो उच्च एवं श्रेष्ठ विचारों को द्वार-द्वार पहुंचा दे। धर्म को बिना नुकसान पहुंचाए जनता की उन्नति करना हमारा आदर्श वाक्य होना चाहिए।''

स्वामी जी कर्मयोगी थे। कर्मयोग पर प्रकाश डालते हुए कहा कि ''कर्मयोग का आशय क्या हे? इसका आशय है- मौत के मुंह में भी जाकर बिना तर्क-वितर्क किए सभी की सहायता करना। भले ही तुम लाखों बार ठगे जाओ, पर मुंह से एक बात भी मत निकालो और तुम जो कुछ भले काम कर रहे हो, उसके बारे में सोचो तक नहीं। निर्धन के प्रति किए गए उपकार पर गर्व मत करो तथा न ही उनसे कृतज्ञता की ही आशा करो, वरन् प्रत्युत तुम्हीं उसके कृतज्ञ हो, यह विचार कर कि उसने तुम्हें दान देने का एक मौका दिया है। कर्मयोगी को किसी प्रकार के सिद्धांत में विश्वास करने की भी जरुरत नहीं है। वह ईश्वर में भी चाहे विश्वास करे अथवा नहीं करे, किसी तरह का दार्शनिक विचार भी करे अथवा नहीं करे, इससे उसका कुछ बनता- बिगड़ता नहीं है।'' स्वामी जी कहते है कि, ''एकमात्र बुद्ध ही ऐसे थे, जिन्होंने कर्मयोग की पूर्ण साधना की।''

भारत की गरीबी पर स्वामी जी ने कहा कि, ''भारत की विपन्नता तथा विषाद के कारण यह है कि घोंघे की भांति अपना सर्वाग समेटकर मनुष्य ने अपने कार्यक्षेत्र को संकुचित कर लिया है और मनुष्य जाति के लिए जिन्हें सत्य की तृष्णा थी, उन्होंने अपने जीवनप्रद सत्य रत्नों का भण्डार नहीं खोला था। हमारे पतन का एक और कारण यह भी है कि हम लोगों ने बाहर जाकर दूसरे राष्ट्रों से अपनी तुलना नहीं की।'' स्वामी जी का विचार था कि, ''पश्चिमवासियों से भी हमें बहुत कुछ सीखना पड़ेगा, क्योंकि लेन-देन संसार का नियम है। हम उन लोगों से कल-कारखाने के काम सीख सकते हैं, लेकिन हमें और भी कुछ सीखना होगा तथा वह है धर्म और हमारी आध्यात्मिकता।'' स्वामी जी कहते थे कि ''संसार की आध्यात्मिक अनुभूतियां एक विलक्षण शास्त्र है। वेद, पुराण, गीता, बाइबल आदि सभी इसी ग्रंथ के पन्ने हैं। हमें अतीत की बातों को ग्रहण नहीं करना होगा। वर्तमान की ज्ञानरुपी ज्योति का उपयोग करना होगा तथा भविष्य में होने वाली ज्ञानवर्धक बातों को ग्रहण करने के लिए अपने हृदय द्वारों को खुला रखना होगा।''

आज जब देश में आतंक फैला हुआ है, तो हम व्यावहारिक वेदांत से ही भारत को उन्नत बना सकते हैं। प्रेम और भाई चारे का ध्वज प्रत्येक भारतवासी के हृदय में लहराना होगा।

4 जुलाई, 1902 को लगभग 40 वर्ष की आयु में स्वामी विवेकानंद महासमाधि में लीन हो गए। केवल दस वर्ष के कार्यकाल में ही मानव जाति को जो अनमोल विचार दे गए, उनके पूर्ण विकसित होने में 1500 वर्ष लगेंगे। उन्होंने अपने जीवन में जो कार्य किया, उसके दो पहलू हैं- राष्ट्रीय एवं अन्तराष्ट्रीय। इन दोनों क्षेत्रों में उन्होंने जो कार्य किया तथा जो शिक्षा दी, वह वास्तव में विलक्षण है।

आज विवेकानंद का स्मरण हमारे लिए इसलिए भी महत्वपूर्ण है, क्योंकि उन्होंने जिन शिक्षाओं तथा जिन आधारों को देश की उन्नति के लिए जरुरी माना था, वे आज भी हमारे लिए श्रेयस्कर हैं। इसके अतिरिक्त वे इसलिए भी महत्वपूर्ण हैं कि आज हिन्दु धर्म को लेकर एक द्वन्द्व जैसी स्थिति है। विवेकानंद ने उन आधारों पर भारत को मजबूत बनाना चाहा था, जो इस मजबूती को श्रेष्ठता एवं स्थायित्व प्रदान कर सके।

श्री राम मानस - राम की सागर पूजा

श्रीमति संतोष बंसल
लेखिका
दिल्ली

'श्री राम चरित मानस' की कथा के 'सुंदर काण्ड' में 'सागर पूजा' का छोटा सा प्रसंग
जब विभीषण की सलाह पर लक्ष्मण ने रोष में 'दैव –दैव आलसी पुकारा' कहा,
किन्तु श्री राम ने मशविरा मानकर की थी तीन दिन तक अर्चना –आरती और
सागर के तट पर बैठ कर माँगी अथाह – अपार जलराशि के उस पार जाने की राह,
न मानने पर अनुज से अग्नि बाण लाने को कहा था कि –'भय बिनु होय न प्रीती'।
तब भयभीत समुद्र ने ब्राह्मण वेश में प्रगट होकर प्रभु से क्षमा मांगते हुए –
प्रार्थना करते हुए की याचना कि चरित्र में चलन और आचरण महत्वपूर्ण है।
क्योंकि कलयुग के संसार में मनुष्य अपनी मर्यादा का मतलब भूल चुका है,
वह लांघ गया अपनी सारी सीमाएं और चला गया प्रकृति नियमों के विरुद्ध,
जिससे जड़–चेतन दूषित–प्रदूषित हो, विनाश–विध्वंस की ओर बढ़ रहें है।
'गगन समीर अनल जल धरनी' जैसे जड़ पंच भूत और इन्ही से निर्मित
'ढोल गंवार सूद्र पसु नारी' जैसे चेतन प्राणियों के लिए भी ग्रंथो ने गाया है,
जिस स्वरूप में ईश की प्रेरणा से माया ने सृष्टि चलाने को उत्पन्न किया,
आज इसी भव सागर के मध्य इन का शोषण–अवशोषण किया जा रहा है।
चर–अचर में, ब्रह्मांड के चक्र में, सृष्टि के क्रम में व्यवधान पैदा हो रहा है।
तब कोई न समझा था कि सूर्यवंशी प्रभु श्री राम का कुलगुरु महासागर
देख रहा था भविष्य में स्थितियों–परिस्थितियों के दूरगामी परिणाम।
मानस की राम कथा के उस प्रसंग का सन्दर्भ अब बहुत बड़ा हो गया है,
केवल कुछ अक्षरों में लिखे पंचभूत और कुछ लफ्जों में बयान पंच तत्व,
अपने अस्तित्व के लिए जूझ रहें हैं, अपनी अस्मिता के लिए बूझ रहें हैं।
इन सबका अस्तित्व खतरें में है और उन सब का व्यक्तित्व संकट में है।

राष्ट्रीय युवा दिवस (12 जनवरी) पर विशेष

समाज और राष्ट्र के कर्णधार हैं युवा

कृष्ण कुमार यादव
पोस्टमास्टर जनरल, वाराणसी
परिक्षेत्र, वाराणसी, उ.प्र.

युवा वर्ग मानव शक्ति का सबसे प्राणवान और ऊर्जस्वी वर्ग है, जो सदैव प्रगति और विकास का अगुआ रहा है। युवा किसी भी समाज और राष्ट्र के कर्णधार हैं, वे उसके भांवी निर्माता हैं। चाहे वह नेता या शासक के रूप में हों, चाहे डॉक्टर, इन्जीनियर, वैज्ञानिक, साहित्यकार व कलाकार के रूप में हों। इन सभी रूपों में उनके ऊपर अपनी सभ्यता, संस्कृति, कला एवम् ज्ञान की परम्पराओं को मानवीय संवेदनाओं के साथ आगे ले जाने का गहरा दायित्व होता है। भारत को विश्व की महाशक्ति बनाने में युवा शक्ति का सबसे बड़ा योगदान है। आज पूरी दुनिया की निगाहें युवा वर्ग पर टिकी हुई हैं। वे राष्ट्र के सबसे ऊर्जावान भाग में से एक हैं और इसलिए उनसे बहुत उम्मीदें हैं। सही मानसिकता और क्षमता के साथ युवा राष्ट्र के विकास में योगदान कर सकते हैं और इसे आगे बढ़ा सकते हैं। भारत विश्व के सर्वाधिक जनसंख्या वाले देशों में से एक है और हमारी जनसंख्या का लगभग 65 फीसदी हिस्सा युवा हैं। हमारी जनसंख्या का 50 प्रतिशत हिस्सा 18–35 वर्ष की आयु का है। भारत में 27.5 प्रतिशत जनसंख्या 15 से 29 साल के आयुवर्ग के लोगों की है वही 41.3 प्रतिशत लोग 13 से 35 साल की उम्र के हैं। ऐसे में युवाओं की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता है। अगर इन युवाओं को सही ढंग से तराशा और संवारा जाए तो वे राष्ट्रीय गौरव का एक नया इतिहास रच सकते हैं। युवा वर्ग अपनी मेघा, परिश्रम और लगन से सबको चमत्कृत कर सकते हैं और युवा शक्ति भारत को विश्व का मुकुटमणि बना सकती है। इसीलिए यह आवश्यक है कि युवाओं के व्यक्तित्व का निर्माण हमारी प्राथमिकता में शामिल हो।

भारत में स्वामी विवेकानन्द जी की जयंती, अर्थात 12 जनवरी को प्रतिवर्ष 'राष्ट्रीय युवा दिवस' के रूप में मनाया जाता है। संयुक्त राष्ट्र संघ ने सन् 1984 ई. को 'अन्तरराष्ट्रीय युवा वर्ष' घोषित किया था और तदनुसार भारत सरकार ने सन 1984 से ही स्वामी विवेकानन्द जयंती का दिन राष्ट्रीय युवा दिवस के रूप में देशभर में मनाने का निर्णय लिया। स्वामी

विवेकानंद का यह कथन युवाओं के लिए सदा से प्रेरणास्रोत रहा है –"उठो, जागो, स्वयं जागकर औरों को जगाओ। अपने नर–जन्म को सफल करो और तब तक नहीं रुको जब तक लक्ष्य प्राप्त न हो जाये।' निश्चततः स्वामी विवेकानन्द आधुनिक मानव के आदर्श प्रतिनिधि हैं। उनका जीवन दर्शन और आदर्श भारतीय युवकों के लिए प्रेरणा का बहुत बड़ा स्रोत है। उन्होंने हमें कुछ ऐसी वस्तु दी है जो हममें अपनी उत्तराधिकार के रूप में प्राप्त परम्परा के प्रति एक प्रकार का अभिमान जगा देती है। उन्होंने युवाओं का आह्वान किया, 'चिंतन करो, चिंता नहीं, नए विचारों को जन्म दो।' तीस वर्ष की आयु में स्वामी विवेकानन्द ने शिकागो, अमेरिका के विश्व धर्म सम्मेलन में हिंदू धर्म का प्रतिनिधित्व किया और उसे सार्वभौमिक पहचान दिलवायी। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार कहा था–'यदि आप भारत को जानना चाहते हैं तो विवेकानन्द को पढ़िये। उनमें आप सब कुछ सकारात्मक ही पायेंगे, नकारात्मक कुछ भी नहीं।'

युवा शब्द अपने आप में ही उर्जा और आन्दोलन का प्रतीक है। एक राष्ट्र जो ऊर्जावान, जिज्ञासु और मेहनती युवकों से भरा है और उन्हें काम के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करने में सक्षम हो वह अपने विकास के लिए मजबूत आधार बनाता है। युवा वह दीवार है जिस पर राष्ट्र की भावी छतों को सम्हालने का दायित्व है। भारत की कुल आबादी में युवाओं की हिस्सेदारी करीब 65ः प्रतिशत है जो कि विश्व के अन्य देशों के मुकाबले काफी है। इस युवा शक्ति का सम्पूर्ण दोहन सुनिश्चित करने की चुनौती इस समय सबसे बड़ी है। हमारे देश में कई प्रतिभाशाली और मेहनतकश युवा हैं जिन्होंने देश को गर्व की अनुभूति कराई है। भारत में युवा पीढ़ी उत्साहित और नई चीजें सीखने के लिए उत्सुक हैं। चाहे वह विज्ञान, प्रौद्योगिकी या खेल का क्षेत्र हो हमारे देश के युवा हर क्षेत्र में श्रेष्ठ हैं।

अगर देश में युवाओं की मानसिकता सही है और उनके नवोदित प्रतिभाओं को प्रेरित किया गया तो वे निश्चित रूप से समाज के लिए अच्छा काम करेंगे। उचित ज्ञान और सही दृष्टिकोण के साथ वे प्रौद्योगिकी, विज्ञान, चिकित्सा, खेल और अन्य सहित विभिन्न क्षेत्रों में उत्कृष्टता प्राप्त कर सकते हैं। यह न केवल उन्हें व्यक्तिगत रूप से और पेशेवर रूप में विकसित करेगा बल्कि पूरे राष्ट्र के विकास और प्रगति के लिए भी योगदान देगा। दूसरी ओर यदि देश के युवा शिक्षित नहीं हैं या बेरोजगार हैं तो यह अपराध को जन्म देगा।

वस्तुतः इसके पीछे जहाँ एक ओर अपनी संस्कृति और जीवन मूल्यों से दूर हटना है, वहीं दूसरी तरफ हमारी शिक्षा व्यवस्था का भी दोष है। इन सब के बीच आज का युवा अपने को असुरक्षित महसूस करता है, फलस्वरूप वह शार्टकट तरीकों से लम्बी दूरी की दौड़ लगाना चाहता है। जीवन के सारे मूल्यों के उपर उसे 'अर्थ' भारी नजर आता है। इसके अलावा समाज में नायकों के बदलते प्रतिमान ने भी युवाओं के भटकाव में कोई कसर नहीं छोड़ी है। फिल्मी परदे और अपराध की दुनिया के नायकों की भांति वह रातों–रात उस शोहरत और मंजिल को पा लेना चाहता है, जो सिर्फ एक मृगतृष्णा है। ऐसे में एक तो उम्र का दोष, उस पर व्यवस्था की विसंगतियाँ, सार्वजनिक जीवन में आदर्श नेतृत्व का अभाव एवम् नैतिक मूल्यों का अवमूल्यन ये सारी बातें मिलकर युवाओं को कुण्ठाग्रस्त एवम् भटकाव की ओर ले जाती हैं, नतीजन–अपराध, शोषण, आतंकवाद, अशिक्षा, बेरोजगारी एवम् भ्रष्टाचार जैसी समस्याएँ जन्म लेती हैं।

भारतीय संस्कृति ने समग्र विश्व को धर्म, कर्म, त्याग, ज्ञान, सदाचार और मानवता की भावना सिखाई है। सामाजिक मूल्यों के रक्षार्थ वर्णाश्रम व्यवस्था, संयुक्त परिवार, पुरूषार्थ एवम् गुरूकुल प्रणाली की नींव रखी। भारतीय संस्कृति की एक अन्य विशेषता समन्वय व सौहार्द्र रहा है, जबकि अन्य संस्कृतियाँ आत्म केन्द्रित रही हैं। इसी कारण भारतीय दर्शन आत्मदर्शन के साथ–साथ परमात्मा दर्शन की भी मीमांसा करते हैं। अंग्रेजी शासन व्यवस्था एवम् उसके पश्चात हुए औद्योगीकरण, नगरीकरण और अन्ततः पाश्चात्य संस्कृति के प्रभाव ने भारतीय संस्कृति पर काफी प्रभाव डाला। निश्चिततः इन सबका असर युवा वर्ग पर भी पड़ा है। आर्थिक उदारीकरण और भूमण्डलीकरण के बाद तो युवा वर्ग के विचार–व्यवहार में काफी तेजी से परिवर्तन आया है। पूँजीवादी बहुराष्ट्रीय कम्पनियों की बाजारी लाभ की अन्धी दौड़ और उपभोक्तावादी विचारधारा के अन्धानुकरण ने उसे ईर्ष्या, प्रतिस्पर्धा और शार्टकट के गर्त में धकेल दिया। कभी विद्या, श्रम, चरित्रबल और व्यवहारिकता को सफलता के मानदण्ड माना जाता था पर आज सफलता की परिभाषा ही बदल गयी है। आज का युवा अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों से परे सिर्फ आर्थिक उत्तरदायित्वों की ही चिन्ता करता है।

युवाओं को प्रभावित करने में फिल्मी दुनिया और विज्ञापनों का काफी बड़ा हाथ रहा है पर इनके सकारात्मक तत्वों की बजाय नकारात्मक तत्वों ने ही युवाओं को ज्यादा प्रभावित किया है। फिल्मी परदे पर हिंसा, बलात्कार, प्रणय दृश्य, यौन–उच्छश्रृंखलता एवम् रातों–रात अमीर बनने के दृश्यों को देखकर आज का युवा उसी जिन्दगी को वास्तविक रूप में जीना चाहता है। वास्तव में परदे का नायक आज के युवा की कुण्ठाओं का विस्फोट है। पर युवा वर्ग यह नहीं सोचता कि परदे की दुनिया वास्तविक नहीं हो सकती, परदे पर अच्छा काम करने वाला नायक वास्तविक जिन्दगी में खलनायक भी हो सकता है।

शिक्षा व्यक्ति के भौतिक और नैतिक दोनों प्रकार के विकास का आधार तैयार करती है। यह हमारी संवेदनाओं और अवधारणाओं को परिष्कृत बनाती है, जिससे मन–मस्तिष्क को स्वतंत्रता और उनके बीच तालमेल स्थापित करती है और वैज्ञानिक दृष्टि के विकास में सहायता मिलती है। शिक्षा ज्ञान, बुद्धि और कौशल को समृद्ध बनाती है। शिक्षा व्यवसाय नहीं संस्कार है, पर जब हम आज की शिक्षा व्यवस्था देखते हैं, तो यह व्यवसाय ही ज्यादा ही नजर आती है। शिक्षण संस्थाएं, युवाओं के मस्तिष्क के लिए नए क्षितिजों के द्वार खोलने और उन्हें आज के जीवन संदर्भा की चुनौतियों का सफलतापूर्वक मुकाबला करने के लिए तैयार करती हैं। युवा वर्ग स्कूल व कॉलेजों के माध्यम से ही दुनिया को देखने की नजर पाता है, पर शिक्षा में सामाजिक और नैतिक मूल्यों का अभाव

होने के कारण वह न तो उपयोगी प्रतीत होती है व न ही युवा वर्ग इसमें कोई खास रूचि लेता है। अतः शिक्षा मात्र डिग्री प्राप्त करने का उद्देश्य बन कर रह गयी है। पहले शिक्षा के प्रसार को सरस्वती की पूजा समझा जाता था, फिर जीवन मूल्य, फिर किताबी और अन्ततः इसका सीधा सरोकार मात्र रोजगार से जुड़ गया है। ऐसे में शिक्षा की व्यवहारिक उपयोगिता पर प्रश्नचिन्ह लगने लगा है। शिक्षा संस्थानों में प्रवेश का उद्देश्य डिग्री लेकर अहम् सन्तुष्टि, मनोरंजन, नये सम्बन्ध बनाना और चुनाव लड़ना रह गया है। छात्र संघों की राजनीति ने कॉलेजों में स्वस्थ वातावरण बनाने के बजाय महौल को दूषित ही किया है, जिससे अपराधों में बढ़ोत्तरी हुई है। ऐसे में युवा वर्ग की सक्रियता हिंसात्मक कार्यों, उपद्रवों, हड़तालों, अपराधों और अनुशासनहीनता के रूप में ही दिखाई देती है। शिक्षा में सामाजिक और नैतिक मूल्यों के अभाव ने युवाओं को नैतिक मूल्यों के सरेआम उल्लंघन की ओर अग्रसर किया है, मसलन–मादक द्रव्यों व धूम्रपान की आदतें, यौन–शुचिता का अभाव, कॉलेज को विद्या स्थल की बजाय फैशन ग्राउण्ड की शरणस्थली बना दिया है। दुर्भाग्य कई बार शिक्षक भी प्रभावी रूप में सामाजिक और नैतिक मूल्यों को स्थापित करने में असफल रहे हैं।

आज के युवा को सबसे ज्यादा राजनीति ने प्रभावित किया है पर राजनीति भी आज पदों की दौड़ तक ही सीमित रह गयी है। स्वर्गीय प्रधानमंत्री राजीव गाँधी ने जब मताधिकर की उम्र अट्ठारह वर्ष की थी तो उन्होंने 'इक्कीसवीं सदी युवाओं की' आह्वान के साथ की थी पर राजनीति के शीर्ष पर बैठे नेताओं ने युवाओं का उपयोग सिर्फ मोहरों के रूप में किया। विचारधारा के अनुयायियों की बजाय वैयक्तिक प्रतिबद्धता को महत्ता दी गयी। स्वतन्त्रता से पूर्व जहाँ राजनीति देश प्रेम और कर्त्तव्य बोध से प्रेरित थी, वहीं स्वतन्त्रता बाद चुनाव लड़ने, अपराधियों और भ्रष्टाचारियों को सरंक्षण देने और महत्वपूर्ण पद हथियाने का जरिया बन गयी। राजनीतिज्ञों ने भी युवा कुण्ठा को उभारकर उनका अपने पक्ष में इस्तेमाल किया और भविष्य के अच्छे सब्जबाग दिखाकर उनका शोषण किया। विभिन्न राजनैतिक दलों के युवा संगठन भी शोशेबाजी तक ही सीमित रह गये हैं। ऐसे में अवसरवाद की राजनीति ने युवाओं को हिंसा भड़काने, हड़ताल व प्रदर्शनों में आगे करके उनकी भावनाओं को भड़काने और स्वंय सत्ता पर काबिज होकर युवा पीढ़ी को गुमराह किया है।

आदर्श नेतृत्व ही युवाओं को सही दिशा दिखा सकता है। किसी दौर में युवाओं के आदर्श स्वामी विवेकानन्द, महात्मा गाँधी, नेता जी सुभाष चंद्र बोस, चंद्रशेखर आजाद, सरदार भगत सिंह, डॉ. अम्बेडकर जैसे लोग या उनके आसपास के सफल व्यक्ति, वैज्ञानिक और शिक्षक रहे। पर आज के युवाओं के आदर्श वही हैं, जो शार्टकट के माध्यम से ऊँचाइयों पर पहुँच जाते हैं। फिल्मी अभिनेता, अभिनेत्रियाँ, विश्व–सुन्दरियाँ, भ्रष्ट अधिकारी, अपराध जगत के डॉन, उद्योगपति और राजनीतिज्ञ लोग उनके आदर्श बन गये हैं। नतीजन, अपनी संस्कृति के प्रतिमानों और उद्यमशीलता को भूलकर रातों–रात ग्लैमर की चकाचौंध में वे शीर्ष पर पहुँचना चाहते हैं। पर वे यह भूल जाते हैं कि जिस प्रकार एक हाथ से ताली नहीं बज सकती उसी प्रकार बिना उद्यम के कोई ठोस कार्य भी नहीं हो सकता। कभी देश की आजादी में युवाओं ने अहम् भूमिका निभाई और जरूरत पड़ने पर नेतृत्व भी किया। कभी स्वामी विवेकानन्द जैसे व्यक्तित्व ने युवा कर्मठता का ज्ञान दिया तो सन् 1977 में लोकनायक जयप्रकाश नारायण के आह्वान पर देश के युवा एक होकर सड़कों पर निकल आये पर आज वही युवा अपनी आन्तरिक शक्ति को भूलकर चन्द लोगों के हाथों का खिलौना बन गये हैं।

आज का युवा संक्रमण काल से गुजर रहा है। वह अपने बलबूते आगे तो बढ़ना चाहता है, पर परिस्थितियाँ और समाज उसका साथ नहीं देते। चाहे वह राजनीति हो, फिल्म व मीडिया जगत हो, शिक्षा हो, उच्च नेतृत्व हो– हर किसी ने उसे सुखद जीवन के सब्ज–बाग दिखाये और फिर उसको भँवर में छोड़ दिया। ऐसे में पीढ़ियों के बीच जनरेशन गैप भी बढ़ा है। समाज की कथनी–करनी में भी जमीन आसमान का अन्तर है। एक तरफ वह सभी को डिग्रीधारी देखना चाहता है, पर उन सभी हेतु रोजगार उपलब्ध नहीं करा पाता, नतीजन– निर्धनता, मँहगाई, भ्रष्टाचार इन सभी की मार सबसे पहले युवाओं पर पड़ती है। इसी प्रकार व्यावहारिक जगत में आरक्षण, भ्रष्टाचार, स्वार्थ, भाई–भतीजावाद और कुर्सी लालसा जैसी चीजों ने युवा हृदय को झकझोर दिया है। जब वह देखता है कि योग्यता और ईमानदारी से कार्य सम्भव नहीं, तो कुण्ठाग्रस्त होकर गलत रास्तों पर चल पड़ता है। निश्चितः ऐसे में ही समाज के दुश्मन उनकी भावनाओं को भड़काकर व्यवस्था के विरूद्ध विद्रोह के लिए प्रेरित करते हैं, फलतः अपराध और आतंकवाद का जन्म होता है। युवाओं को मताधिकार तो दे दिया गया है पर उच्च पदों पर पहुँचने और निर्णय लेने के उनके स्वप्न को दमित करके उनका इस्तेमाल नेताओं द्वारा सिर्फ अपने स्वार्थ में किया जा रहा है।

इंटरनेट और सोशल मीडिया के बढ़ते प्रभाव एवं विभिन्न गैजेट्स ने भी युवाओं की जीवन शैली और जीवन के प्रति समग्र रवैया में परिवर्तन किया है। मोबाइल फोन और सोशल मीडिया ने भले ही एक क्लिक पर दुनिया तक पहुँच आसान कर दी हो, पर

युवा इसमें इतने तल्लीन रहते हैं कि वे यह भूल गए हैं कि इसके बाहर भी एक जीवन है। एक ही घर में बैठे पारिवारिक सदस्य एक दूसरे से रियल टाइम में नहीं बल्कि व्हाट्सएप के माध्यम से संवाद कर रहे हैं। फेक न्यूज और फॉरवर्डेड मैसेज के मकड़जाल में युवा इस बात का निर्णय ही नहीं कर पाते कि क्या सही या गलत है ? किताबों और पत्र–पत्रिकाओं की बजाय गूगल पर हर कुछ ढूंढने को तत्पर युवा वर्ग अपनी मौलिकता और शोधपरक सोच को कुंद करता नजर आ रहा है। निश्चिततः इन सबका उसके भौतिक, मानसिक, पारिवारिक और सामाजिक जीवन पर भी गहरा असर पड़ रहा है।

भारत विश्व की सबसे तेजी से बढ़ती अर्थव्यवस्था वाला देश है। आज हम व्यापक भूमंडलीकरण तथा गहन प्रतिस्पर्धा के कठिन दौर से गुजर रहे हैं। विज्ञान व प्रौद्योगिकी का तेज गति से विस्तार हो रहा है। यह क्षेत्र लगातार अंतर आयामी, बहुआयामी और बहुद्देशीय होता जा रहा है। भारत के पास उन बड़ी शक्तियों में शामिल होने की पूरी क्षमता है, जिनकी 21वीं सदी में प्रमुख भूमिका होगी। ऐसे में सारी दुनिया भारत की युवा शक्ति पर टकटकी लगाए हुए हैं। युवाओं ने आरम्भ से ही इस देश के आन्दोलनों में रचनात्मक भूमिका निभाई है– चाहे वह समाजिक, शैक्षणिक, राजनैतिक या सांस्कृतिक हो। युवा व्यवहार मूलतः एक शैक्षणिक, सामाजिक, संरचनात्मक और मूल्यपरक समस्या है जिसके लिए राजनैतिक, सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक सभी कारक जिम्मेदार हैं। ऐसे में समाज के अन्य वर्गों को भी जिम्मेदारियों का अहसास होना चाहिए, सिर्फ युवाओं को दोष देने से कुछ नहीं होगा, क्योंकि सवाल सिर्फ युवा शक्ति के भविष्य का नहीं है, वरन् अपनी संस्कृति, सभ्यता, मूल्यों, कला एवम् ज्ञान की परम्पराओं को भावी पीढ़ियों के लिए सुरक्षित रखने का भी है।

सरस्वती वंदना

अंकुर सिंह
जौनपुर
उत्तर प्रदेश

हे विद्यादायिनी! हे हंसवाहिनी!
करो अपनी कृपा अपरम्पार।
हे ज्ञानदायिनी! हे वीणावादिनी!
बुद्धि दे!, करो भवसागर से पार।।

हे कमलवसिनी!, हे ब्रह्मापुत्री!
तम हर, ज्योति भर दे।
हे वसुधा!, हे विद्यारूपा!
वीणा बजा, ज्ञान प्रबल कर दे।।

हे वाग्देवी!, हे शारदे!
हम सब है, तेरे साधक।
हे भारती!, हे भुवनेश्वरी!
दूर करो हमारे सब बाधक।।

हे कुमुदी!, हे चंद्रकाति!
हम बुध्दि ज्ञान तुझसे पाए।
हे जगती!, हे बुद्धिदात्री!
हमारा जीवन तुझमें रम जाए।।

हे सरस्वती!, हे वरदायिनी!,
तेरे हाथों में वीणा खूब बाजे।
हे श्वेतानन!, हे पद्यलोचना!
तेरी भक्ति से मेरा जीवन साजे।।

हे ब्रह्म जाया!, हे सुवासिनी!
कर में तेरे ग्रंथ विराजत।
हे विद्या देवी!, हे ज्ञान रूपी!
ज्ञान दे करो हमारी हिफाजत।।

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन द्वारा अखिल भारतीय सारस्वत सम्मान समारोह (द्वितीय) संपन्न।

14 राज्यों से चुनकर आए प्रतिभागियों को मिला सम्मान।

25 दिसंबर 2022, भारत रत्न महामना पंडित मदन मोहन मालवीय जी एवं श्री अटल बिहारी वाजपेई जी की जयंती पर्व पर 'गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन' द्वारा आईपीएस एकेडमी इंदौर के प्रीमियम ऑडिटोरियम में उत्तर प्रदेश, हरियाणा, उत्तराखंड, मेघालय, तमिलनाडु, गुजरात, राजस्थान, छत्तीसगढ़, दिल्ली, पंजाब, बिहार, मध्य प्रदेश, ओडिशा व महाराष्ट्र से आए हुए साहित्यकारों, शिक्षकों, प्रोफेसरों, साइंटिस्टों, डॉक्टरों, मेधावी छात्रों एवं समाज सेवकों को शाल, प्रशस्ति-पत्र, एवं ट्रॉफी देकर सम्मानित किया गया।

यह समारोह महंत पीर योगी राम नाथ जी महाराज, (भर्तहरि गुफा उज्जैन), राष्ट्र संत बालयोगी उमेशनाथ जी महाराज (श्री क्षेत्र बाल्मीकि धाम पीठाधीश्वर उज्जैन), एवं महंत योगी विलासनाथ जी महाराज (गालणे, महाराष्ट्र) के पावन सानिध्य में आयोजित किया गया। कार्यक्रम मुख्य अतिथि माननीया मंत्री सुश्री उषा ठाकुर जी (संस्कृति, पर्यटन, धार्मिक न्यास एवं धर्मस्व विभाग, म.प्र.) की उपस्थित में संपन्न हुआ।

कार्यक्रम का शुभारंभ उपस्थित नाथ संप्रदाय के सिद्ध संतों , पीर योगी रामनाथ जी महाराज, उमेशनाथ जी महाराज, डॉ. योगी

विलासनाथ जी महाराज, माननीया मंत्री सुश्री उषा ठाकुर जी के कर कमलों द्वारा मां सरस्वती, सिद्ध योगी गोरक्षनाथ जी, एवं सिद्ध योगी बाबा बालक नाथ जी के चित्रों पर पुष्प, माल्यार्पण, एवं दीप प्रज्वलित कर किया गया।

'गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन' के अध्यक्ष योगी शिवनंदन नाथ जी ने मंच पर उपस्थित सभी नाथ संतो एवं माननीया मंत्री जी (मुख्यअतिथि) को शाल एवं पुष्प द्वारा सम्मानित किया एवं कार्यक्रम में अपना अमूल्य समय प्रदान करने के लिए आप सभी का आभार व्यक्त किया। दूरस्थ प्रदेशों से पधारे एवं स्थानीय क्षेत्रों से आए हुए सभी प्रतिष्ठित, सम्मानित अतिथियों प्रतिभागियों का योगी शिवनंदन नाथ जी ने अभिनंदन एवं आभार प्रकट किया।

समारोह में इंदौर के प्रमुख न्यूरोलॉजिस्ट डॉ. आवेग भन्डारी को उनकी निःस्वार्थ समर्पित समाज सेवा के लिए सर्वश्रेष्ठ न्यूरो चिकित्सक, प्रमुख उद्योगपति बालाजी ग्रुप आफ कम्पनीज के चेयर मेन श्री विजय भट्ट जी को उद्योग रत्न, श्री घनश्याम बंसिया पाटीदार जी को कृषि रत्न, श्री सचिन पाटीदार (मुकाती) जी, श्री हरिओम ठाकुर जी, श्री सुभाष जी महोदय, श्री गोलू शुक्ला जी

एवं श्री गौरव रणदिवे जी को समाजसेवी रत्न, श्रद्धा चौबे जी एवं श्री छोटू जी शास्त्री को पत्रकार शिरोमणि, श्री डॉ. प्रशांत चौबे जी (अतिरिक्त पुलिस कमिश्नर) को शौर्य रत्न से सम्मानित किया गया।

डॉ. प्रभात श्रीवास्तव (उ.प्र.) को होम्योपैथिक साइंटिस्ट – जे टी केन्ट अवॉर्ड, डॉ. साक्षी पैन्यूली (उत्तराखण्ड) को हिमालय क्षेत्र की दुर्लभ वनस्पतियों से स्वास्थय तत्वों की खोज के लए विज्ञान रत्न, डॉ. ज्ञानी देवी गुप्ता (पंजाब) को साहित्य शिरोमणि, डॉ. शकुंतला कालरा (दिल्ली) को तुलसी सम्मान, दया शर्मा (मेघालय) को काव्य भूषण, प्रो.(डॉ.) दिवाकर 'दिनेश' गौड़ (गुजरात) को विद्या मार्तण्ड, डॉ. अलका यादव (छत्तीसगढ़) को समाजसेवी रत्न, विजय कुमार (तमिलनाडु) को शिक्षक गौरव, सच्चिदानंद किरण (बिहार) को काव्य शिरोमणि, डॉ. सत्यवीर सिंह (राजस्थान) को विद्या प्रभाकर, गरिमा भाटि (हरियाणा) को विद्या वारिधि सम्मान प्रदान किया गया। इसी प्रकार आमंत्रित शेष सभी प्रतिष्ठित प्रतिभागियों को प्रशस्ती पत्र–शॉल–ट्रॉफी प्रदान कर सम्मानित किया गया। उत्कृष्ट मंच संचालन के लिये श्री निखिल जैन (सी.एस.) को ट्रॉफी प्रदान कर सम्मानित किया गया।

फाउण्डेशन द्वारा प्रकाशित पुस्तकों का भव्य विमोचन रचनाकारों को मिला सम्मान।

'गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन' द्वारा प्रकाशित पुस्तकों 'काव्यांजलि' (साझा काव्य संग्रह) एवं 'हमको बस इंतजार करना था' (ग़ज़ल एवं काव्य संग्रह) का भव्य विमोचन महंत पीर योगी राम नाथ जी महाराज, राष्ट्रीय संत बाल योगी उमेशनाथ जी महाराज, महंत योगी विलासनाथ जी महाराज एवं माननीया मंत्री सुश्री उषा ठाकुर जी के कर कमलों द्वारा किया गया। काव्यांजलि (साझा काव्य संग्रह) में प्रकाशित सर्वश्रेष्ठ रचनाकार को क्रमशः प्रथम पुरस्कार सम्मान राशि 11,000 डॉ. उषा देव (दिल्ली), द्वितीय पुरस्कार सम्मान राशि 5,100 डॉ. सुमन मिश्रा (झांसी) एवं तृतीय पुरस्कार राशि 2,500 डॉ. संतोष खन्ना (दिल्ली) को फाउण्डेशन के अध्यक्ष योगी शिवनंदन नाथ जी द्वारा प्रदान किया गया।

कार्यक्रम में आईपीएस एकेडमी के पांच मेधावी छात्रों को कम्प्यूटर साइंस एण्ड इंजीनियरिंग (बी.टेक. प्रथम वर्ष) जेईई मेन में उल्लेखनीय अंक अर्जित करने पर 'शिक्षा गौरव सम्मान' फाउण्डेशन के अध्यक्ष द्वारा शाल एवं ट्रॉफी प्रदान कर सम्मानित किया गया।

योगी उमेशनाथ जी महाराज ने धर्म, संस्कृति और अध्यात्म को कैसे बचाया जाये और उसका संरक्षण कैसे किया जाए इस पर अपना वक्तव्य दिया। पीर योगी रामनाथ जी महाराज एवं डॉ. योगी विलासनाथ जी महाराज ने फाउण्डेशन द्वारा विभिन्न प्रदेशों में आयोजित कार्यक्रमों कि सफलता के लिए अध्यक्ष योगी शिवनन्दन नाथ जी एवं उनकी टीम को आशीर्वाद प्रदान किया।

माननीया मंत्री सुश्री उषा ठाकुर जी ने अपने उद्बोधन में संस्कृति, अध्यात्म, धर्म की उन्नति सवंर्धन एवं उसके प्रसारण पर विशेष बल दिया, गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन के उद्देश्यों को जनकल्याणार्थ बताते हुए आयोजित कार्यक्रम की सराहना की एवं फाउण्डेशन के समस्त पदाधिकारियों का उत्साहवर्धन किया।

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन द्वारा अखिल भारतीय सारस्वत सम्मान समारोह (द्वितीय) संपन्न।

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन द्वारा अखिल भारतीय सारस्वत सम्मान समारोह (द्वितीय) संपन्न।

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन द्वारा अखिल भारतीय सारस्वत सम्मान समारोह (द्वितीय) संपन्न।

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन द्वारा अखिल भारतीय सारस्वत सम्मान समारोह (द्वितीय) संपन्न।

गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फाउण्डेशन द्वारा अखिल भारतीय सारस्वत सम्मान समारोह (द्वितीय) संपन्न।

बच्चों में संस्कारों का अभाव दोषी कौन?

श्रीमती सुषमा सागर मिश्रा
सेवानिवृत्त प्रधानाचार्या
राजकीय बालिका
विद्यालय, लखनऊ

मानव जीवन का बचपन एक दर्पण की भांति होता है जिसमें उसके भावी व्यक्तित्व की झलक देखने को मिलती है। विश्व के महापुरुषों की जीवनी से स्पष्ट है कि उनका बाल्यकाल अत्यंत संस्कारिक, अनुशासित, सुसंस्कृत, एवं आत्मसम्मान से परिपूर्ण था, उनमें साहस, आत्मविश्वास, धैर्य एवं संवेदना की ऐसी उदात्त भावनाएं थी जिन्होंने उन्हें एक साधारण मानव से महापुरुषों की श्रेणी में लाकर खड़ा कर दिया। इसके विपरीत बचपन में कुण्ठित, अव्यवस्थित एवं अनुशासनहीन जीवन जीने वाले बालक एक भ्रमित, कुसंस्कारी एवं अपराधी का जीवन जीने के लिए मजबूर हो जाते हैं, स्पष्ट है कि बचपन ही भावी समाज का निर्माता होता है, एक आदर्श, सुसंस्कृत एवं संस्कार युक्त व्यक्तित्व की गढ़ने की प्रक्रिया बचपन से ही प्रारंभ हो जाती है।

शिक्षित परन्तु संस्कारविहीन मानव ठीक उस पुष्प की भांति होता है जो सुन्दर तो होता है परन्तु सुगंधविहीन। यह सच है कि प्रबल संस्कार से ही सार्थक शिक्षा पल्लवित होती है। वर्तमान परिवेश में समाज में शिक्षा का दायरा तो बढ़ा है परंतु शिक्षितों में संस्कारिकता का नितान्त अभाव बढ़ता चला जा रहा है सम्पूर्ण समाज में जीवन मूल्यों के सौंदर्य बोध में अतिशय गिरावट आती जा रही है। आज का विद्यार्थी जो कल का भविष्य है वह तनाव, अवसाद, बाह्य परिवेश के आकर्षण से प्रभावित होकर अनुशासनहीनता का शिकार बनते जा रहे हैं। इसके लिए जिम्मेदार है पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण, माता–पिता की ओर से सर्व सुलभ सुविधा से परिपूर्ण जीवन, भौतिकवादी चकाचौंध एवं समाज के साथ–साथ संस्कारों के प्रति उदासीनता है।

परिवार बालक की प्रथम पाठशाला होती है एवं माता पिता उसके प्रथम शिक्षक होते हैं अतः समाज से पूर्व उनकी जिम्मेदारी अपने बच्चों के प्रति सर्वाधिक बनती है, आज के समय में भी देखा जाता है कि जो माता–पिता अपने बच्चों में उच्च संस्कारों के अंकुर आरोपित करते हैं वे बिना बाह्य परिवेश से प्रभावित हुए उनके द्वारा दी गई शिक्षाओं को अंगीकार कर अपने अपने माता–पिता के सपनों को साकार करते हैं अतः माता–पिता का प्रथम कर्तव्य है कि वे अपने बच्चों को भौतिक संसाधनों के साथ–साथ संस्कारों की सौगात भी दे तो अति श्रेष्ठ नवांकुरों का निर्माण होगा ।

घर के बाद बच्चा स्कूल जाता है तो शिक्षक की जिम्मेदारी बनती है कि वो बच्चों को उच्च संस्कारों से युक्त बनाएं क्योकि संस्कारों का ज्ञान एवं उनकी सुंदरता बच्चों को उन्नत एवं श्रेष्ठ बनाने में सहायक होती है जो भविष्य में सफलता की सीढ़ी को सुगम बनाती है ,छात्र जीवन से ही बच्चों में बड़ों के प्रति सम्मान एवं छोटों का प्यार का भाव जाग्रत करना, सदैव सच बोलना, अपना काम स्वयं एवं समय पर करना , साथ ही अनुशासित रहने की आदत उन्हें अन्य बच्चों से श्रेष्ठ एवं संस्कारित बनाने में सहायक होते हैं अतः शिक्षक अपने छात्रों को शिक्षा के साथ साथ उच्च संस्कारों से परिपूर्ण बनाएं तभी शिक्षा की सार्थकता है क्योकि संस्कार और शिक्षा एक ही सिक्के के दो पहलू होते हैं।

संस्कारों में ह्रास के लिए जिम्मेदार हमारा समाज एवं सर्व सुलभ सोशल मीडिया, फूहड़ फिल्में हैं जो भौतिकता की चमक–दमक के साथ साथ हिंसा एवं अश्लीलता से परिपूर्ण होती हैं, जिनके हीरो व हीरोइन आज के युवा के चहेते होते हैं और वे उन्हीं का अनुकरण करना चाहते हैं। ऐसी स्थिति में पुनः माता–पिता एवं शिक्षकों की जिम्मेदारी बढ़ जाती है, बच्चों को सही गलत का अंतर करना सिखाएं और युवाओं को भ्रमित होने की दशा में सही राह से अवगत कराएं।

बच्चों में संस्कारों में कमी का अन्य कारण पारिवारिक विघटन है , आज के समय में माता– पिता रोजी – रोटी की तलाश में अपने परिवार से दूर एक अलग आशियाना बना लेते हैं जहां परिवार के नाम पर पति– पत्नी और बच्चे ही होते हैं ऐसे एकल परिवार में बच्चे दादी– बाबा के प्यार और संरक्षण से वंचित रह जाते हैं ऐसी स्थिति में माता– पिता की जिम्मेदारी अपेक्षाकृत अधिक हो जाती है और यदि दोनों नौकरी में हैं तो अक्सर उनका एकाकीपन उन को भ्रमित कर गलत राह चुनने की अनुमति दे देता है। ऐसे में यदि समय रहते न चेता गया तो बाद में यदि उन्हें आगाह भी किया जाए तो उसे अनदेखी कर अपनी मनमानी ही करते हैं।

नानी– दादी की कहानियां जो बच्चों को नैतिकता की राह दिखाती हैं उनके जीवन से विलुप्त हो गई हैं। सच कहें तो संयुक्त परिवार में होने वाले कई सामाजिक, व्यवहारिक एवं सांस्कारिक ज्ञान से बच्चे वंचित रह जाते हैं क्योंकि इनका भी बच्चों को संस्कारित करने में बहुत बड़ा योगदान है।

आधुनिक शिक्षा व्यवस्था का बच्चों को संस्कारविहीन बनाने में बहुत बड़ा योगदान है क्योकि अंग्रेजी स्कूलों में पढ़ कर बच्चे स्वयं की समृद्ध एवं शक्तिशाली मातृभाषा हिंदी और संस्कृत को दीन–हीन मानकर उपेक्षित कर देते हैं और स्वयं को आधुनिक दिखाने की होड़ में अपने मौलिक संस्कारों को छुपा कर उनकी अनदेखी करते हैं साथ ही पाश्चात्य सभ्यता को अपना कर गौरवान्वित महसूस करते हैं, सच तो यह है कि समाज एवं देश की उन्नति के लिए अपने संस्कारों का निर्वहन कर उन पर गर्व का अनुभव होना चाहिये अन्यथा हमारी सांस्कृतिक विरासत शनैः शनैः पतन के गर्त में समाती चली जाएगी और हमारा सामाजिक अस्तित्व शून्य होता जायेगा।

अन्त में मैं बस इतना ही कहूंगी कि बच्चे सदैव हम बड़ो का अनुसरण करते हैं बच्चे वही व्यवहार अपनाते हैं जैसा कि वे अपने से बड़ों के माध्यम से सीखते हैं, तो सर्वप्रथम स्वयं को संस्कारिक बनाना अति आवश्यक है, यदि पिता घर के अंदर बैठकर अपने बच्चे से कहता है कि 'जाओ बाहर खड़े अंकल जी से कह दो पापा घर पर नहीं है' तो बच्चे कितना भी सिखाए वह सच की अहमियत को नहीं समझेगा और झूठ की ओर प्रोत्साहित होगा। यदि हम अपने संस्कार सुनिश्चित कर ले तो बच्चों के संस्कार स्वयं ही सुनिश्चित हो जाएंगे, बस थोड़ा त्याग, समर्पण, और प्यार से बच्चों के भविष्य की दिशा का निर्धारण सदैव सकारात्मकता की ओर होगा क्योंकि शिक्षा से जहां योग्यता का उद्भव होता है वहीं संस्कारों से उस योग्यता की उपयोगिता का निर्धारण होता है अतः माता–पिता, परिवार, शिक्षक, शिक्षा पद्धति एवं समाज सभी का दायित्व बनता है कि वे बच्चों को अच्छी शिक्षा के साथ–साथ संस्कारों के आभूषण से भी विभूषित करें जिससे भविष्य में वो विशिष्ट जन के रूप में जाने जाएं और वे अपनी आने वाली पीढ़ी को अपने सभी विशिष्ट गुणों से सुसज्जित कर देश को उन्नति के शिखर पर ले जाने में सफल हो सके।

मानस की प्रासंगिकता

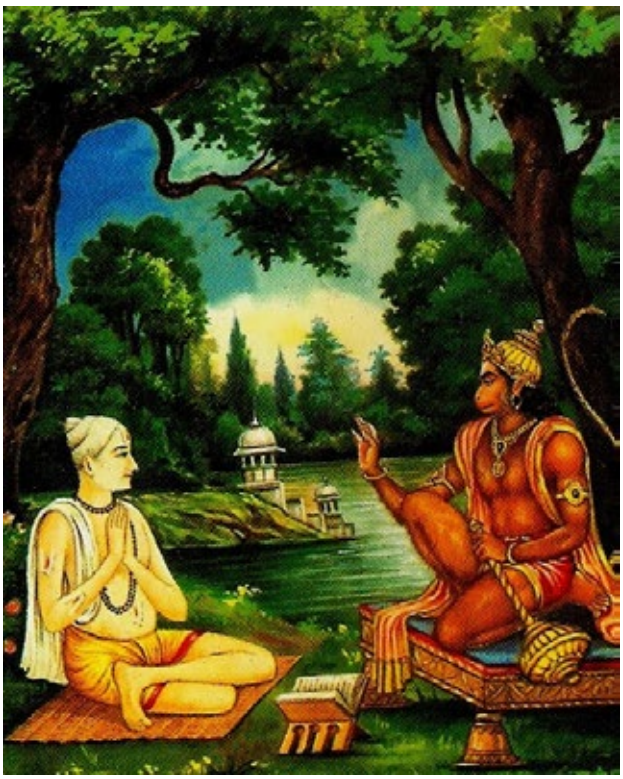

डॉ. सुनीता सिंह 'सुधा'
लेखिका, कवियत्री, गीतकार
वाराणसी

वर्णानामार्थसंघानां रसाना छंदसामपि। मंगलानां च कर्तारौ वंदे वाणी विनायकौ।।

मानस के मंगलाचरण में ही गोस्वामी जी ने अपनी दृष्टि स्पष्ट कर दी है। वे भक्त कवि थे। उनकी पूज्या वाणी थी। वाणी के 'वर्णानां का कर्तृत्व' ठीक घटित है। अतः मानस में तुलसी दास का सारस्वत रूप ही प्रधान है। तुलसीदास ने शपथपूर्वक कहा है कि –

'कवित विवके एक नहि मोरे। सत्य कहौं लिखि कागद कोरें।।

तुलसीदास में भक्त, सामाजिक और सारस्वत में कौन–सा रूप 'मानस' में प्रधान है इसका पता मंगलाचरण से ही चल जाता है। यदि भक्त रूप प्रधान होता तो सबसे पहले राम की वंदना होती। साम्प्रदायिक भक्त इस पद्य का अर्थ 'रामपरक' ही करते पर तुलसीदास में साम्प्रदायिकता प्रमुख न थी। सिद्धांततः वे अनन्य उपासक थे। वे मानते थे कि समस्त विभूतियों का उत्सव एक है तभी उन्होंने कहा – 'सियाराममय सब जग जानी'। व्यवहार में वे सामाजिकता को मानते थे, लोकप्रचलित रीति–नीति में आस्था रखते थे। गणेश की वंदना आरंभ में इसलिए की है।

भारतीय साहित्यशास्त्र के अनुसार महाकाव्य भावात्मक, घटनात्मक और वर्णनात्मक होता है। हिंदी में महाकाव्य या प्रबंध काव्यों की तीन शैलिया दिखाई देती हैं– संस्कृत, फारसी और अपभ्रंश की शैली। संस्कृत शैली केशवदास ने अपनाई और रामचंद्रिका को वर्णानात्मक प्रसंगों से भर दिया। जायसी आदि ने फारसी की शैली अपनाई और अपने काव्य में नरजीवन और उसके आनुषगिक पदार्थों के वर्णनों पर अधिक ध्यान दिया। तुलसीदास मानस में भक्ति और शील का स्वरूप अधिक अंकित किया है। वस्तु और नेता पर अधिक जोर देने वाले थे। अस्तु 'मानस' काव्यग्रंथ पहले है भक्तिग्रन्थ बाद में हैं। काव्य का मानदण्ड तुलसीदास ने विभाव को विशेष रखा है।

तुलसीकृत 'रामचरित मानस' एक सम्पूर्ण व्यावहारिक आदर्श जीवन को समेटे हुए है। आज तक मानस पर जितनी भी चर्चा, आलोचना, समालोचना और समीक्षा हुई है उतनी शायद ही किसी अन्य लिपिबद्ध ग्रन्थ की हुई होगी। मानस में संसारी जीवों के व्यक्तिगत,

पारिवारिक, सामाजिक और राजनैतिक जीवन के विभिन्न अंगों को इतने सूक्ष्म और मर्मस्पर्शी ढंग से वर्णित किया गया है वह चाहे परिवार के सदस्यों के परस्पर सम्बन्धों की गरिमा, मर्यादा हो या समाज के विभिन्न वर्गों के आपसी सम्बन्धों की मर्यादा हो या राजकीय कामकाज। मानस में जीवन व्यवस्था एक आदर्श समाज एवं आदर्श राज्य की व्यवहारिक सृजन है। मानस में राम के राज्याभिषेक के लिए राजा दशरथ गुरु वशिष्ठ से कहते हैं कि यदि आपका आदेश हो तो सभा का आयोजन किया जाय।'' गुरु वशिष्ठ की सहमति प्राप्त होने पर समाज जुटाये जाते हैं तथा पंचों की स्वकृति के पश्चात् ही राम के राज्यभिषेक की तैयारी की जाती है। इससे यह स्पष्ट है कि मानस में समाज को विशेष महत्त्व दिया गया है।

संस्कृत साहित्य के महर्षि वाल्मीकि से लेकर व हिंदी वर्तमान साहित्य के नरेश मेहता के 'संषय की एक रात' और अन्य अनेकों साहित्यकारों ने राम के चरित्र को विभिन्न माध्यमों से वर्णित किया है। यही कारण है कि राम कथा को लोकमानस तक संप्रेषित करने का प्रयास किया गया है। हरिवंशपुराण, स्कंदपुराण, पद्मपुराण, भागवतपुराण, अध्यात्म रमायण, आनंद रामायण, भुशुंडी रमायण, कंब रमायण आदि ग्रन्थों द्वारा भी राम कथा का व्यापक प्रचार हुआ है। प्रतिभा नाटक, महावीर चरित, उदात राघव, कुन्दमाला, अनर्धराघव आदि नाटकों द्वारा भी राम कथा को लोकप्रिय बनाया गया है, परन्तु राम कथा की जो प्रसिद्वी गोस्वामी, तुलसीदास द्वारा मिली, वह किसी दूसरे से नहीं मिली। तुलसीदास ने 'रामचरितमानस' कवितावली, विनयपत्रिका, दोहावली, उत्तर रामचरित आदि ग्रन्थों के माध्यम से सरल शब्द सर्जना के द्वारा राम चरित्र को जैसा पुस्तुत किया। वैसा कोई अन्य न कर सका। गोस्वामी जी ने मानस में समाजवाद को स्थापित करना चाहा है। सामाजिक मूल्य व्यक्ति के हित और स्वार्थ से ऊपर होते हैं। राम ने भी समाजवाद के इस अर्थ को अपने जीवन में उतारा और अपने आचरण से लोगों को समझाया भी। वास्तव में राम के चरित्र में समाजवाद विशेष महत्त्व रखता है। सता सुख को त्यागकर, समाजवाद को अपनाकर राम ने अपने साहस का परिचय दिया है। राम का चरित्र लोक मानस का आदर्श चरित्र है।

सूरः सिरताज महाराजनि के महाराज
जाको नाम लेत ही सुखेत होत ऊसरो।
साहब कहाँ जहान जानकीस सो सुजान,
सुमिरे कृपालु के मराल होत खूसरो।।
केवट, पषान, जातुधान, कपि, भालु तारे,
अपनायो तुलसी सो धींग धमधूसरो।
बोल को अटल, बाँह को पगार दीनबंधु
दूबरे को दानी, को दयानिधान दूसरो।।

अर्थात् वीरशिरोमणि महाराजाओं के महाराज, जिस रामचन्द्र का नाम लेते ही उधर खेत अच्छा (उपजाऊ) हो जाता है। संसार में जानकीनाथ के समान सुजान स्वामी कहाँ है, जिस कृपालु का स्मरण करने से खूसट हंस हो जाता है। मूर्ख भी हंस के समान विवेकी हो जाता है। केवट, अहल्या, विभीषण तथा बानर भालुओं को जिसने तारा ओर तुलसी के समान उद्दण्ड मूर्ख को अपनाया। जो बात का धनी है। कहा सो कहा, जिसकी बात पगार के समान है, जो दीनदयालु है, गरीबों का दाता है। ऐसा दयालु दूसरा कौन है। ठीक ऐसे ही रामचरित मानस की चौपाई देख सकते हैं–

जे न मित्र होहिं दुखारी। तिन्हहि विलोकत पातक भारी।।
निज दु:ख गिरि सम रजकरि जाना। मित्रक दु:ख रज मेरु समाना।।

मानस में भगवान राम और सुग्रीव के मित्रता के संदर्भ में चौपाई मनुष्यों में ज्ञान भरती है कि मित्रता निभाने वाले भगवान भी सहायता करते हैं। जो लोग मित्र या फिर दूसरों के दु:ख को देखकर सुखी नहीं होते, उन लोगों की भगवान मदद नही करते हैं। ऐसे लोगों को देखने से पाप लगता है। जो लोग अपने दु:ख को भूलकर दूसरों की सहायता करते है। ईश्वर स्वयं उसकी मदद करता है।

राम संस्कृति, धर्म, राष्ट्रीयता और पराक्रम के प्रतिरूप हैं। राम आज भी उतने प्रासंगिक है जितने वे अपने युग में रहे। राम की कार्यप्रणाली का दूसरा नाम प्रजातंत्र है। यही कारण रहा होगा कि अध्यात्म गीता का आरंभ राम जन्म से शुरू होकर श्रीकृष्ण रूप में पूर्ण होता है। राम सामंजस्य का दूसरा नाम है। राम काव्य परम्परा के उद्भव और विकास का अनुशीलन करने वाले विद्वानों के अनुसार राम उत्तरवैदिक काल के दिव्य महापुरुष है। वेदों में भी कुछ स्थलों पर 'राम' शब्द का प्रयोग मिलता है, किन्तु उसका अर्थ दशरथ पुत्र राम नहीं है।

वाल्मीकि रामायण को आदि काव्य मानकर रामकथा का मूल स्त्रोत स्वीकार किया जाता है। पश्चात् विद्वानों ने इसका रचनाकाल ग्यारहवीं शताब्दी ई. पूर्व से लेकर तीसरी शती ई. पूर्व के मध्य स्वीकार करते हैं। आदिकाव्य में राम का चित्रण उदात और असाधारण गुणों से संपन्न दिव्य महापुरुष के रूप में हुआ है।

संस्कृत ग्रन्थों के साथ–साथ राम कथा, बौद्ध एवं जैन ग्रन्थों में भी मिलता है। बौद्ध जातक कथाओं में रामकथा 'दशरथजातक' अनामर्कजातक तथा चीनी 'त्रिपिटिक' के अंतर्गत 'दशरथकथानक' में उपलब्ध है। बौद्ध ग्रन्थों की अपेक्षा जैन ग्रन्थों में रामकथा का वर्णन अपेक्षाकृत विस्तारपूर्वक हुआ है। विमलसूरि रचित 'पउमचरियम' अत्यंत उत्तम रचना है। भाव और शैली की दृष्टि से भुवनतुंग सूरि की 'सियाचरियम' तथा 'रामचरियम' भी उल्लेखनीय है। वहीं अन्य रचनाओं में रविषेणाकृत 'पद्मचरित तथा गुणभद् रचित 'उत्तरपुराण' भी उल्लेख्य है। इसी प्रकार आचार्य हेमचन्द्र रचित 'त्रिष्टिशाला का पुरुषचरितम तथा योग शास्त्र' की टीका में भी रामकथा के प्रसंग हैं। आठवीं, नौवीं शताब्दी के मध्य स्वयंभू का पउम चरित्र तथा पुष्पदंत का महापुराण। दक्षिण के अलवार भक्तों में काठकोप तथ नक्मालवार राम की पादुका के अवतार माने जाते हैं। संस्कृत, पाली, प्राकृत एवं अपभ्रंश में रामकथा को देखें तो मास रचित, प्रतिभा नाटक 'अभिषेक नाटक', कालिदासकृत 'रघुवंश' प्राकृत भाषा में प्रवरसेन का रावणवध भवभूति का 'महावीर चरित' उत्तररामचरित आदि उल्लेखनीय है। आधुनिक भारतीय भाषाओं में बंगला भाषा में कृतिवासीकृत 'रामायण' तमिल के महाकवि कब की कब रामायण तथा तेलगू की रंग रामायण एवं भास्कर रामायण

भी विशेष स्थान रखता है, परन्तु हिंदी भाषा में राम कथा के ओज एवं माधुर्य को जनमानस की भावभूमि पर अधिष्ठित करने का श्रेय भक्तिकालीन कवियों को ही प्राप्त है। उत्तरी भारत में रामभक्ति के प्रवर्त्तन का श्रेय आचार्य रामानंद को प्राप्त है। उनका 'रामरक्षास्तोत्र' प्रसिद्ध रचना है। निगुर्ण मार्गी कबीर ने कहा– ''दशरथ सुत हिहुं लोक है बरवाना, राम–नाम को मरम न आना।'' वहीं सगुण रूप के उपासक तुलसीदास ने कहा–

जेहि इमि गावहिं वेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान।

गोस्वामी तुलसीदास जी की सबसे बड़ी विशेषता यह रही कि उन्होंने 'मानस' में रामकथा के विविध प्रसंगों के माध्यम से राजनीतिक, सामाजिक एवं पारिवारिक जीवन के आदर्श को जनता के सामने प्रस्तुत कर खण्डों में बंटे हिन्दु समाज को केंद्र में लाया। तुलसी ने राम को रहस्यमयी या कठिन न बनाकर राम को कण–कण में व्याप्त बताया। राम सभी के लिए उसी प्रकार सुलभ हैं जिस प्रकार अन्न और जल।

गोस्वामी जी ने मर्यादा पुरुषोत्तम राम के शील, शक्ति और सौन्दर्य के अद्‌भुत रूप का गुणगान करते हुए लोकमंगल की साधनावस्था के पथ को प्रशस्त किया है। 'रामचरित मानस' में उन्होंने राम और शिव दोनों को एक–दूसरे का भक्त अंकित करके वैष्णव एवं शैव संप्रदायों को एक सामान्य भूमि प्रदान की है। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के अनुसार ''भारत वर्ष का लोकनायक वहीं हो सकता है जो समन्वय करने की अपार धैर्य लेकर आया हो''। वास्तव में राम का चरित लोक मानस का आदर्श चरित है। वे महानायक हैं, ईश्वर के अवतार हैं, दीनानाथ हैं। राम अपने समय के अनेक विरोधी संस्कृतियों साधनाओं, जातियों, आचार निष्ठाओं और विचार पद्धतियों को आत्मसात करते हुए उनका समन्वय करने का साहस किया। उनका लोक रक्षक रूप प्रधान है वे मर्यादा पुरुषोत्तम और आदर्श के प्रतिष्ठापक हैं। राम ने गृहस्थ जीवन कही उपेक्षा नहीं की उन्होंने लोक सेवा और आदर्श गृहस्त का उदाहरण उपस्थित कर सामान्य जन के जीवन स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयत्न किया।

राम इतिहास नहीं, वर्तमान और भविष्य भी हैं। राम दृष्टि के कण–कण में विद्यमान हैं। वर्तमान राजनैतिक उथल–पुथल, सामाजिक अस्थिरता और भौतिक आकर्षण के समय में राम के साहस और आदर्श का स्मरण होते ही एक आदर्श समाज सामने प्रस्तुत हो उठता है। ऐसा समाज जिसमें सभी व्यक्ति अपने धर्म का पालन करते थे, अनीतिन हो वैमनस्य न हो। पारस्परिक स्नेह हो, श्रम की महत्ता हो। सभी स्वलंबी हो। परोपकार अनिवार्य भाषा हो। आज फिर से तुलसीकृत 'मानस' को बार–बार पढ़ते हुए हमें अपनी आंतरिक शक्तियों को एकत्रित कर सामाजिक बुराईयों के अंत का प्रण करना पड़ेगा। राम और उनके साहस को सार्थक करना पड़ेगा, तभी पुनः विश्व में भारत का जयघोष होगा। तभी समाजवाद का सोच सार्थक होगा, सामाजिक समरसता फैलेगी और सभी प्रकार से देश सम्पन्न होगा। 'रामचरितमानस' वह अक्षय विभूति है जिसके कारण भारत केवल सम्पन्न ही नहीं है, अपितु गर्व से अपना सर ऊपर उठाये है। 'मानस' के गर्भ में छिपे मोनियों की ज्योंति से कितने ही मन मंदिर देदीप्यमान हुआ करते हैं। वह ज्योंति दीन–दीनों के झोपड़े तक ही नहीं रहते। बड़े–बड़े राजप्रसादों तक को प्रदीप्त करते हैं। ''इस मानस की लोल–लहरियों में कितने हंस, बक, काक' आदि अच्छे और बुरे सभी डूबकिया लगाया करते हैं।

कहा जाता है कि जिस दिन राम का अवतार हुआ उसी दिन रामचरित मानस का भी अवतार हुआ। रामचरित मानस इस कलयुग में राम का अवतार ही है।

सहायक ग्रन्थ –
श्रामचरित मानस – तुलसीदास, मं: प्रथम श्लोक
गोसाई तुलसीदास – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र पृष्ठ – 59
कवितावली – पं. चन्द्रशेखर शास्त्री पृष्ठ – 125
रामचरित मानस – तुलसीदास 4/4
हिंदी साहित्य का इतिहास – डॉ. नगेन्द्र पृष्ठ – 168
गोसाई तुलसीदास – विश्वनाथ प्रसाद मिश्र पृष्ठ – 72

शुभ मुहूर्त के लिए चौघड़िया देखकर कार्य करें।

दिन का चौघड़िया			प्रातः 6 से सायं 6 बजे तक				चौघड़िया	रात का चौघड़िया			सायं 6 से प्रातः 6 बजे तक			
रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि	समय	रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	6 से 7.30 तक	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ
चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	7.30 से 9 तक	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग
लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	9 से 10.30 तक	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ
अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	10.30 से 12 तक	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत
काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	12 से 1.30 तक	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर
शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	1.30 से 3 तक	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग
रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	3 से 4.30 तक	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल
उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ	शुभ	चर	काल	4.30 से 6 तक	शुभ	चर	काल	उद्वेग	अमृत	रोग	लाभ

शुभ मुहूर्त : अमृत, शुभ, लाभ, चर हैं। | अशुभ मुहूर्त : उद्वेग, काल, रोग हैं।

सत्संग की महिमा

डॉ. शकुंतला कालरा
संपादक (अध्यात्म संदेश)
एसोसियेट प्रोफेसर
मैत्रेयीकॉलेज,
दिल्ली विश्वविद्यालय
दिल्ली

तात स्वर्ग अप वर्ग सुख, धरिअ तुला एक अंग।
तूल न ताहि सकल मिलि, जो सुख लव सत संग।। *रा.च.मा. 5/4 दोहा*

यह चौपाई सुंदरकांड में उस समय की है लंका में प्रवेश से पूर्व हनुमान की लंका नाम की राक्षसी से भेंट होती है। हनुमान के मुश्ठिका–प्रहार से वह विकल होकर धरती पर गिर जाती है। उसे ब्रह्मा जी का वर याद आ जाता है कि जब किसी वानर के मुश्ठिका प्रहार से तुम विकल होगी तो समझना कि अब राक्षसों का अंत निकट है।

अर्थात् सात स्वर्ग और अपवर्ग को सुख को तराजू के एक पलड़े पर रखा जाए और दूसरे पलड़े पर सत्संग के सुख को तो वे सब उस सुख के बराबर नहीं हो सकते जो सत्संग लव मात्र से होता है।

संसार–सुख से बढ़कर स्वर्ग–सुख है और स्वर्ग–सुख से बढ़कर अपवर्ग का (मोक्ष) का सुख है किंतु इन तीनों से अधिक सुखकर सत्संग प्राप्ति का सुख है। यद्यपि पुण्यों के प्रतिफल रूप में स्वर्ग की प्राप्ति होती है किंतु पुण्य क्षीण होने पर पुनः मृत्युलोक में आना पड़ता है इसलिए स्वर्ग से भी अधिक मोक्ष का सुख कहा है। मोक्ष सुख भी बिना हरि भक्ति के ठहर नहीं सकता और हरि भक्ति प्राप्ति का माध्यम सत्संग को माना है। काकभुशुण्डि पक्षीराज गरुड़ को यही समझाते हैं कि कैवल्य रूप परमपद अर्थात् मोक्ष अत्यंत दुर्लभ है किंतु रामभजन से वह स्वतः प्राप्त हो जाता है –

अतिदुर्लभ कैवल्य परम पद। संत पुरान निगम आगम बद।
राम भजत सोइ मुकुति गोसाईं। अनइच्छित आवइ बरिआई। *रा.च.मा. 7/119/2*
आगे कहते हैं भक्ति के लिए सद्संग आवश्यक है।
सत्संग बिना भगति टिकती नहीं – रहि न सकइ हरि, भगति बिहाई। *रा.च.मा. 7/119/3*

विवेक की प्राप्ति सद्संग द्वारा ही संभव है। बालकांड के आरंभ में सत्संग की महिमा और संतों का चरित्र–वर्णन करते हुए तुलसीदास कहते हैं –

बिनु सत्संग बिबेक न होई। रामकृपा बिनु सुलभ न सोई।।

रा.च.मा. 1/3/4

सत्संग से विवेक की प्राप्ति होती है और विवेकवान व्यक्ति कीर्ति, सद्गति और विभूति सब पा जाता है। तुलसीदास कहते हैं कि जिस-जिसने संसार में सुबुद्धि पाई है वह सब सद्संगति का प्रभाव से पाई है। वेदों में भी इस बात की प्रबल पुष्टि की है कि संसार में जिसने भी ये गुण पाए हैं वे केवल सत्संग के सान्निध्य में पाए हैं और कोई भी साधन मनुष्य को कीर्ति/सद्गति देने में समर्थ नहीं है। सत्संगति पाकर दुष्ट तक सुधर जाते हैं। जैसे पारस के स्पर्ष से लोहा सोना हो जाता है वैसे ही कुमति वाले भी सुमतिवान बन जाते हैं। सत्संगति का ऐसा प्रभाव है कि उनकी संगत में दुष्ट भी अपने दुर्गुणों को छोड़कर गुण ग्रहण करने लगते हैं –

मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जतन जहाँ जेहिं पाई।।
सो सब जानब सत्संग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।।

रा.च.मा. 1/3/3

इसी कांड में आगे तुलसीदास कहते हैं कि यह सत्संगति आनंद और कल्याण की मूल है। मनुष्य चाहे जितने सुख के साधन एकत्र कर ले पर सब उसे क्षणिक सुख-सुविधा तो दे सकते हैं किंतु स्थायी आनंद नहीं। क्योंकि ये साधन और इनसे मिलने वाले सुख सभी नश्वर हैं। यह सत्संग प्राप्रकश होता है? तुलसीदास कहते हैं राम की कृपा से प्राप्त कब होता है? जीव यदि इसे अपने प्रयास से प्राप्त करना चाहे तो भी वह प्राप्त नहीं कर सकता। विनयपत्रिका में तुलसीदास कहते हैं–

जब द्रवै दीनदयाल राघव साधुसंगति पाइयै – पद 136

तुलसी के सभी पात्र राम से उनके चरणों में दृढ़ अनुराग और अनपायनि भक्ति का वरदान मांगते हैं। साथ ही सद्संग की कामना करते हैं क्योंकि अविरल और अनपायिनी भक्ति के लिए सद्संग आवश्यक है। स्वयं शंकर जब राम से भक्ति का वरदान मांगते हैं तो सदा सत्संग सहित भक्ति का वरदान मांगते हैं –

बार-बार बर माँगहु हरश देहु श्री रंग।
पद सरोज अनपायनि भक्ति सदा सद्संग।। *रा.च.मा.*

सुन्दरकांड में भी विभीषण हनुमान से यही बात कहते हैं कि मेरा तामसिक शरीर है। जप-तप आदि कोई साधन भी नहीं जिससे ईश्वर मुझ पर प्रसन्न हों। पुनः भक्ति भी कहाँ? श्रीराम के चरणों में प्रीति भी नहीं। भगवद् प्राप्ति के कर्म, ज्ञान और भक्ति ये तीन साधन गीता में कहे गए हैं। सात्विक प्रवृत्ति वाले, इन तीन साधनों को यथाशक्ति, यथारुचि करते हैं। 'तामस तन' कहकर स्वयं को ज्ञान रहित कहा। तामसिक व्यक्ति की सद्ग्रंथों के अध्ययन/श्रवण में कोई रुचि नहीं होती। ज्ञान के अर्जन की पिपासा ही उसमें नहीं होती। विभीषण पुनः अपने लिए 'साधन हीन' शब्द का प्रयोग करते हैं। जप-तप, यज्ञादि साधन द्वारा भी भगवद्भक्ति प्राप्त होती है। तामसी जीव इन साधनों की ओर कभी प्रवृत्त नहीं होता। 'प्रीति न पद सरोज मन माही' से स्पष्ट किया कि भगवान में प्रेम होना भक्ति है। उपासना है। विभीषण कहते हैं कि इस दृष्टि से मेरे पास उपासना और भक्ति का बल भी नहीं है। तामस प्रवृत्ति वाला होने के कारण ज्ञान, कर्म और भक्ति तीनों साधनों द्वारा मैंने कभी भगवद्-प्राप्ति का प्रयास नहीं किया इसलिए मुझे भरोसा न था कि कभी मुझ अनाथ पर प्रभु कृपा करेंगे। विभीषण ने हनुमान से पहले यही पूछा था कि क्या मैं प्रभु का कृपा पात्र बन सकता हूँ? क्योंकि जिस गुण से प्रभु मिलते हैं। वह तो मुझमें एक भी नहीं। किंतु अब मुझे इस बात का पक्का भरोसा हो गया कि मुझ पर प्रभु की कृपा-दृष्टि है। हे हनुमान आपका मुझे दर्शन देकर कृतार्थ करना स्वयं हरि की कृपा का ही सुफल है क्योंकि इससे पूर्व मुझे अपनी अपात्रता के कारण भरोसा न था कि राम मुझ पर कृपा करेंगे। हरि की कृपा के बिना संतों का संग भी प्राप्त नहीं होता। संत ही प्रभु-मिलन का पथ बतलाते हैं। विभीषण ने संकेत दे दिया प्रभु की कृपा से मुझे संत मिले हैं और अब संत द्वारा मुझे प्रभु मिलेंगे।

तामस तन कछु साधन नाँही। प्रीति न पद सरोज मन माँही।।
अब मोहि भा भरोस हनुमंता। बिनु हरि कृपा मिलहिं न संता।।

रा.च.मा. 5/7/2

हनुमान जी की कथा जानकर विभीषण ने यह जान लिया कि यह रामदूत है। इनके द्वारा मुझे राम का दर्शन हो जाएगा। हनुमान के दर्शन द्वारा विभीषण को इस बात का भरोसा हो गया। आगे विभीषण यही कहते हैं कि यह रघुबीर की कृपा का ही प्रतिफल है कि आपने हठ करके मुझे दर्शन दिए –

जौं रघुबीर अनुग्रह कीन्हा। तौ तुम्ह मोहि दरसु हठि दीन्हा।।

रा.च.मा. 5/7/3

राम ने मुझ पर अनुग्रह किया। यह मेरे भाग्य की प्रबलता है कि आपके दर्शन हुए। अपने प्रयास से संतों के दर्शन नहीं होते। जीव चाहे सारा ब्रह्माण्ड खोज ले तो भी उसे संत नहीं मिलते और जब हरिकृपा करते हैं तो घर बैठे ही संतों के दर्शन हो जाते हैं। विभीषण का संकेत अपनी ओर है कि मुझ पर प्रभु राम ने कृपा की है और मुझे आपके दर्शन अपने घर बैठे ही हो गए। तुम्हें देखकर भरोसा हुआ कि राम ने मुझ पर कृपा की। तुलसीदास यहाँ कहना चाहते है कि जीव पर जब हरि कृपा करते हैं तो अनायास संतों के दर्शन हो जाते हैं। 'संत दर्शन' हरिकृपा का ही फल समझना चाहिए। उत्तरकांड में गरुण के मुख से भी तुलसीदास ने यही कहलवाया है। गरुड़ जी काकभुशुण्डि के दर्शन से गद्गद् हैं क्योंकि उनके मोहाज्ञान का निवारण उन्हीं के द्वारा होता है। काकभुशुण्डि के मुख से हरिकथा का सुनना यहाँ वैसे ही जैसे हनुमान के मुख से विभीषण हरिकथा सुनते हैं –

गयउ मोर संदेह सुनेउँ सकल रघुपति चरित।
भयउ राम पद नेह तव प्रसाद बायस तिलक।। *7/68 सोरठा।*

काकभुशुण्डि के दर्शन के बाद गरुड़ का सारा संदेह जाता रहता है। वह अत्यंत हर्षित होते हैं। यहाँ गरुड़ के मुख से तुलसीदास जी कहते हैं लौकिक मनुष्यों की तरह मुझे भी उनके ईश्वरत्व में भारी संदेह हो गया था। आप के मुख से मैंने हरिचरित सुना जिससे मेरा संदेह जाता रहा –

तुलसीदास ने 'संतदर्शन' को हरिकृपा का ही प्रतिफल कहा है –

संत बिसुद्ध मिलहिं परि तेही। चितवहिं राम कृपा करि जेही।।

रा.च.मा. 7/69/4

संत से पहले विशेषण दिया 'बिसुद्ध' अर्थात् सच्चे संत उसी को मिलते हैं जिसकी ओर राम अपनी कृपा–दृष्टि डालते हैं – सच्चे संत ही किसी की शंकाओं का, अज्ञान का निवारण कर सकते हैं –

रामकृपा तव दरसन भयऊ। तव प्रसाद सब संसय गयऊ।।

रा.च.मा. 7/69/4

तुलसीदास स्पष्ट कहते हैं कि यह मेरा मत नहीं है। मैं तो वेदशास्त्र और पुराण–सम्मत बात कह रहा हूँ –

निगमागम पुरान मत एहा। कहहिं सिद्ध मुनि नहिं संदेहा।।

रा.च.मा. 7/69/3

दोनों प्रसंगों में अद्‌भुत साम्य है। सुंदरकांड में विभीषण के अपने लिए 'तामसतनु' जैसे दीनता सूचक वचन सुनकर हनुमान उनकी ग्लानि को कम करने के लिए कहते हैं –

कहहु कवन मैं परम कुलीन। कपि चंचल सबही विधि हीना।।

रा.च.मा. 5/7/4

और उत्तरकांड में काकभुशुण्डि गरुण के मन के दैन्य को दूर करने के लिए कहते हैं कि मैं भी प्रभु राम की माया के प्रभाव में आ गया। फिर उनकी कृपा से ही मेरे हृदय से माया का आवरण हटा। राम की कृपा से जीव के सब संदेह मिट जाते हैं।

तुलसीदास ने यही बात रावण के मुख से भी कहलवाई है –

हो इहि भजन न तामस देहा। *रा.च.मा. 3/23/3*

संतों और भक्तों ने 'सत्संग' को तामसिक प्रवृत्तियों के नाश का सबसे बड़ा साधन माना है। तामसी प्रवृत्तियाँ तभी तक रहती हैं जब तक जीव को सद्‌संग प्राप्त नहीं होता। सद्‌संग प्राप्त होते ही जीव की सभी दुशप्रवृत्तियाँ नष्ट हो जाती हैं। बालकांड के आरंभ में संतों की महिमा का गुणगान करते हुए तुलसीदास कहते हैं कि संत–समाज तीर्थराज हैं जिसमें स्नान करते ही तत्काल सुफल प्राप्त होता है, दुशप्रवृत्तियाँ, सद्‌प्रवृत्तियों में परिणत होने लगती हैं। काग के समान काले चित्त वाले कोयल की तरह मधुर स्वभाव के हो जाते हैं। बगुले की तरह मक्कार व्यक्ति हंस की तरह बन जाते हैं। हंस मुक्त आत्माओं का प्रतीक है। सत्संगति प्राप्त करते ही जीव देहाध्यास के सारे बंधन तोड़कर मुक्तात्मा बन जाता है। उसका देहाभिमान छूट जाता है। बालकांड के आरंभ में सत्संगति की महिमा करते हुए तुलसीदास ने स्पष्ट घोषणा की है कि –

मज्जन फल पेखिअ तत्काला। काक होहिं पिक बकउ मराला।।
सुनि आचरज करै जनि कोई। सत्संगति महिमा नहिं गोई।।
बाल्मीकि नारद घट जोनी। निज निज मुखनि कहि निज होनी।।

रा.च.मा. 1/3/1–2

उमा संत कह इहइ बड़ाई। मंद करत जो करइ भलाई।।

रा.च.मा. 5/41/7–8

सत्संग पर बल देने के अनेक कारण है। तुलसीदास कहते हैं संतों का संग हर प्रकार से बड़ाई देने वाला है। शिव भवानी से कहते हैं कि संत की यही बड़ाई है कि वह बुराई करने पर भी भलाई ही करते हैं। रावण ने भरी सभा में भाई विभीषण पर चरण–प्रहार किया। उन्हें अपमानित किया। उनका मान–मर्दन किया किंतु फिर भी विभीषण बार–बार रावण के चरण ग्रहण करते हैं और कहते हैं मैं बार–बार आपके हित की बात कहता रहूँगा। आप मेरे पिता के समान हैं। मुझे मारा तो अच्छा किया। आपका हित राम की शरण में जाने से है। उनसे वैर–विरोध छोड़ दीजिए। आपका हित राम–भजन में है। इस तरह विभीषण का स्वभाव संतों का स्वभाव है। रावण के क्रोध करने पर भी उन्होंने क्रोध नहीं किया। लात खाने पर भी रावण के हित की बात दुहराते रहे। संत समाज की वंदना करते हुए तुलसीदास ने साधु–चरित्र की उपमा कपास से की है जो स्वयं कष्ट सहकर दूसरों के छिद्र को ढकने का वस्त्र बनता है –

साधु चरित सुभ चरित कपासू। निरस बिसद गुनमय फल जासू।।
जो सहि सुख परछिद्र दुरावा। बंदनीय जेहिं जग जस पावा।।

रा.च.मा. 1/2/3

किष्कंधाकांड में भी संतों के इसी कोमल स्वभाव और सहिष्णुता का वर्णन किया है। संतों को यदि प्रारबधवश खलजनों का साथ मिलता भी है तो वे उनके वचनों को वैसे ही बिना किसी प्रतिक्रिया के सहन कर जाते हैं जैसे पर्वत बर्शा की बूंदों के आघात को सहता है –

बूँद अघात सहहिं गिरि कैसे। खल के बचन संत सहे जैसे।।

रा.च.मा. 4/14/3

रीतिकालीन भक्त कवियों ने भी सत्संगति के लाभ का वर्णन किया है। कवि गंग 'सज्जन–महिमा' में यही कहते हैं कि संत स्वयं ताप सहन कर लेते हैं किंतु दूसरे के ताप हरते हैं–

सहत संताप आप, पर को मिटावै ताप,
करुना को डुम, सुभ छाया सुखकारी है – गंग कवित्त, सं. बटे कृष्ण

तुलसीदास कहते हैं कि इस जगत् में जिसने भी जो–जो सद्‌गुण अर्जित किए हैं वह सब सत्संगति का प्रभाव है। सत्संगति, कीर्ति, सद्‌गति, विभूति आदि गुण प्रदान करने वाली है। वाल्मीकि डाकू से ऋषि बन गए यह सब संतों की संगति का ही सुपरिणाम है। वेदों में तो स्पष्ट रूप से इस बात का समर्थन किया है कि अन्य किसी उपाय से सद्‌गुणों की प्राप्ति नहीं होती –

मति कीरति गति भूति भलाई। जब जेहिं जनत जहाँ जेहिं पाई।।
सो जानब सत्संग प्रभाऊ। लोकहुँ बेद न आन उपाऊ।।

रा.च.मा. 1/3/3

संतों का सद्‌संग करने से उनका रंग आप पर चढ़ने लगता है। उनका स्वभाव, व्यवहार, आचरण देख–देखकर व्यक्ति उन गुणों को अपने में भी उतारने की चेष्टा करता है। अरण्यकांड में तुलसीदास ने संतों के इसी सुंदर स्वभाव का परिचय दिया है। नारद के प्रश्न करने पर कि संतों के क्या लक्षण हैं? श्रीराम उन्हें संतों के स्वभाव के विषय में कहते हैं जिसके कारण भगवान उनके वश में रहते हैं। राम भक्त–अधीन तो हैं ही वे संतों के भी अधीन हैं। संत काम, क्रोध, मोह, मद और मत्सर आदि विकारों को जीतने

वाले, दूसरों को मान देने वाले, अभिमान रहित धैर्यवान, धर्म के ज्ञान रखने वाले और उन्हें आचरण में उतारने वाले, सरल स्वभाव और सभी से प्रेम करने वाले होते हैं। ऐसे संतों के सान्निध्य में रहते हुए कोई भी व्यक्ति उन्हीं गुणों को अर्जित करने लगता है। इतना ही नहीं दुष्टों को भी अगर भाग्यवश सत्संगति मिल जाती हैं तो वह सुधर जाते हैं। बालकांड में संत–महिमा में तुलसीदास ने स्पष्ट रूप से कहा है –

सठ सुधरहिं संतसंगति पाई। पारस परस कुधात सुहाई।।

रा.च.मा. 1/3/3

राम नारद से आगे कहते हैं कि सबसे बड़ी बात यह है कि संतों की उनकी मेरे चरण–कमल के सिवा किसी में प्रीति नहीं होती, न घर में और न ही अपनी देह में। संत देहासक्ति से भी परे होते हैं। वे जानते हैं कि हम शरीर नहीं हैं। यह देह तो नित्य बदल रही है। देहाध्यास से अहंकार आता है। मनुष्य–जीवन के विकास में तमाम रुकावटों की जड़ अहंकार है। संत बतलाते हैं कि हम शरीर नहीं आध्यात्मिक जगत् की आत्माएँ हैं। ये आत्माएँ संसार में रहते हुए भी निर्लिप्त रहते हैं। वे मायामय संसार में रहते हुए भी उसके छल से भ्रमित नहीं होते, न किसी को धोखा देते हैं, न किसी का बुरा सोचते हैं। ये सबके प्रति सच्चा प्रेम रखते हैं। आगे भी तुलसीदास ने राम के मुख से यही कहलवाया है कि संतजन बिना ही कारण दूसरों के हित में लगे रहते हैं –

गावहिं सुनहिं सदा मम लीला। हेतु रहित परहित रत सीला।।
मुनि सुनु साधुन्ह के गुन जेते। कहि न सकहिं सारद श्रुति तेते।।

रा.च.मा. 3/46/4

साधुजन के अमित गुणों का बखान तो वाणी की देवी स्वयं शारदा भी नहीं कर सकती। ऐसे साधुजनों की संगति मनुष्य के व्यक्तित्व और चरित्र दोनों को परिष्कृत करती है। यह आनंद और मंगल की मूल है –

सत संगत मुद मंग मूला – *रा.च.मा. ᳚1/3/4᳚।*

जीव का चरम लक्ष्य है चतुष्ट्य पदार्थ की प्राप्ति। संतसंगति धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष चारों फल प्रदान करने वाली है। तुलसीदास ने इसे 'जंगम तीर्थराज' कहा है जो तत्काल फल प्रदान करता है–

मुद मंगलमय संत समाजू। जो जग जंगम तीरथ राजू।।

रा.च.मा. 1/2/4

जो इस तीर्थराज में आनंदपूर्वक निमज्जित होता है वह इस शरीर के रहते ही चारों फल प्राप्त कर लेता है –

सुनि समुझहिं जन मुदित मन मज्जहिं अति अनुराग।
लहहिं चारि फल अछत तनु साधु समाज प्रयाग।

रा.च.मा. 1/2 – दोहा

संत कबीर भी तो यही कहते हैं कि संत समागम से चारों पुरुषार्थ एक साथ प्राप्त हो जाते हैं –

तीरथ गए फल एक है संत मिले फल चार.....। कबीर ग्रंथावली

शब्द–भेद से संत कवयित्री सहजोबाई भी यही कहती हैं कि 'साधु संगति' सबसे बड़ा तीर्थ है जिसमें स्नान करने से मुक्ति आदि चार पदार्थ प्राप्त हो जाते हैं –

साधु संग तीरथ बड़ों, तामें नीर विचार।

सहजो न्हाए पाइयो, मुक्ति पदारथ चार।। सहज प्रकाश : (साधु महिमा को अंग) दोहा 2

संत दरिया की दृष्टि में तो साधु–मिलन तीर्थ स्नान के फल से भी अधिक फलदायक हैं –

तीरथ गए फल एक है, साधु मिले फल दोय।

दरिया ग्रंथावली, डॉ. धमेन्द्र ब्रह्मचारी, सहस्रानी, प. 183

भक्त कवयित्री मीरा भी सत्संग को भक्ति के लिए अपरिहार्य मानती हैं। साधु–संगति में उन्हें हरि का ही सुख मिलता है। उनका भी मानना है कि संतों के चरणों में अठसठ तीर्थ और कोटि काशी–गंगा हैं –

अठसठ तीरथ संतों ने चरणे, कोटि कासी कोटि गंग रे।।
मीराबाई पदावली, परशुराम, पद33

भक्ति सभी सुखों की खान है जिसकी प्राप्ति के लिए तुलसीदास ने सत्संग की महती आवश्यकता मानी है। उत्तरकांड में राम के मुख से उन्होंने यही कहलाया है। राम गुरु वसिष्ठ जी, मुनि ब्राह्मणों के बीच कहते हैं कि बड़े भाग्य से मनुष्य शरीर मिला है। यह मोक्ष का द्वार है। मोक्ष की प्राप्ति भक्ति से और भक्ति की प्राप्ति सत्संग से होती है और पुण्य–समूह के बिना संत नहीं मिलते –

भक्ति सुतंत्र सकल सुख खानी। बिनु सतसंग न पावहि प्रानी।।

पुन्य पुंज बिनु मिलहिं न संता। सतसंगति संसृति कर अंता।।

रा.च.मा. 7/45/3

कृष्णभक्तों ने भी सत्संग की बड़ी महिमा गाई है। सूरदास ने भक्ति के उद्रेक एवं विकास में अनुकूल वातावरण उपस्थित करने में सत्संगति की महत्त्वपूर्ण भूमिका स्वीकार की है –

सूरदास संगति करि तिनकी जे हरि सुरति करावत – सूरसागर सटीक, द्वितीय स्कंध, पद 17

तुलसीदास ने सत्संग यानि संतों के संग की महिमा का बखान शबरी प्रसंग में स्वयं राम के मुख से भी कराया है। शबरी के प्रेमपूर्ण आतिथ्य से गद्‌गद श्रीराम ने उसके द्वारा प्रस्तुत कन्दमूल और फलों को बड़े प्रेम से खाया। भले ही शबरी अपनी अधम जाति और अपनी जड़बुद्धि की भर्त्सना करती है किंतु राम उससे स्पष्ट रूप से कहते हैं कि मेरी दृष्टि में जाति, पाति, कुल, धर्म, बढ़ाई, धन, बल, कुटुंब, गुण और चातुर्य का कोई महत्त्व नहीं। मैं तो केवल एक भक्ति का ही नाता मानता हूँ। इनसे सम्पन्न व्यक्ति भी यदि भक्ति से रहित है तो वह मेरा नैकट्य प्राप्त नहीं कर सकता और न ही मेरी कृपा प्राप्त कर सकता है। मेरे चरणों में तुम्हारी भक्ति ने तुम्हें इस बात का अधिकारी बना दिया है कि मैं तुम्हें भक्ति के स्वरूप और विविध प्रकारों के विषय में कहूँ। इसे तुम ध्यानपूर्वक सुनो। राम के मुख से मानसकार ने यहाँ नवधा–भक्ति की व्याख्या

करते हुए पहली भक्ति 'संतों का सत्संग' ही माना है –

प्रथम भगति संतन्ह कर संगा। दूसरि रति मम कथा प्रसंगा।।

रा.च.मा. 3/35/4

उत्तरकांड में भी राम सनकादि मुनियों के दर्शनों से स्वयं को कृतार्थ अनुभव करते हुए अत्यंत मनोहर वाणी में सत्संग की महिमा का बखान करते हैं कि भाग्य से सत्संग की प्राप्ति होती है। सत्संग भक्ति और मोक्ष का द्वार है –

बड़े भाग पाइब सत्संगा। बिनहिं प्रयास होहिं भव भंगा।।

रा.च.मा. 7/33/4

इसी नवधा भक्ति की क्रमानुसार व्याख्या करते हुए राम कहते हैं कि संतों का संग जहाँ मेरी भक्ति का एकरूप है वहाँ संतों को मुझसे भी अधिक कर मानना भक्ति का सर्वोत्कृष्ट रूप है। संतों के प्रति मुझसे भी अधिक श्रद्धा–भक्ति रखना – 'मोते संत अधिक करि लेखा।।' यह भक्ति का सातवाँ प्रकार है। इस प्रकार राम के मुख से सत्संग महिमा कराकर मानों तुलसीदास प्रामाणिकता का पुष्ट प्रमाण दे देते हैं।

उत्तरकांड में काकभुशुण्डि के मुख से तुलसीदास ने कहलाया है कि भक्ति की प्राप्ति भी सत्संग के द्वारा ही संभव है। गरुड़ जी अपनी शंकाए लेकर जब काकभुशुण्डि के पास आते हैं तो वह उन्हें भक्ति की महत्ता बतलाते हुए कहते हैं कि भक्ति सब सुखों की खान है। जो संतों का संग करता है, उसके लिए श्रीराम जी की भक्ति सुलभ हो जाती है –

अस बिचारि जोइ कर सतसंगा। राम भगति तेहि सुलभ बिहंगा।।

रा.च.मा. 7/120/10

कृष्णभक्त हरिराम व्यास की दृष्टि में संत हरि के दास हैं। अतः संतसेवा भगवद्भक्ति का ही अंग है। साधु की संगति भक्ति–प्रदायक है –

हरि तो हरिदासनि की सेवा परमभक्ति को अंग।.....
जिनकी संगति भक्ति देति, हरि हरत सकल भ्रम मूल।

व्यासवाणी, पृ. 94–95।

संतमिलन को सबसे बड़ा सुख इसलिए कहा क्योंकि संत सदा दूसरों की भलाई में संलग्न रहते हैं। मनसा–वाचा–कर्मणा परोपकार करना संतों का सहज स्वभाव है –

पर उपकार बचन मन काया। संत सहज सुभाउ खगराया।।

रा.च.मा. 7/121/7

सूर्य और चन्द्रमा के समान संतों का अभ्युदय सदा और सतत् हितकारी होता है –

संत उदय संतत हितकारी। बिस्व सुखद जिमि इंदु तमारी।।

रा.च.मा. 7/121/11

समग्रतः कहा जा सकता है कि सत्संगति की महिमा अपार है। तुलसीदास के शब्दों में सत्संगति की महिमा कहाँ तक बखान की जाए। ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा सभी कविगण साधु–संगति की अमित महिमा का वर्णन करने में स्वयं को असमर्थ पाते हैं –

विधि हरि हर कबि कोबिद बानी। कहत साधु महिमा सकुचानी।।

रा.च.मा. 1/3/6

विनयपत्रिका में तुलसीदास ने राम से सदा सत्संग की प्राप्ति की प्रार्थना की है क्योंकि राम की प्राप्ति का एक प्रधान साधन सद्संग है। यह संसार के आवागमन का नाश करने वाला है और शरण में आए हुए जीवों के शोक को हरने वाला है –

देहि संत्संग निज अंग श्री रंग! भवभंग–कारण शरण–शोक हारी.....

विनयपत्रिका 57/1

दैत्य, देवता, नाग, मनुष्य, यक्ष, गंधर्व, राक्षस, सिद्ध तथा दूसरे प्रकार के भी सभी जीव सत्संग से अर्थ, धर्म, काम से भी परे आपके परम पद को पा लेते हैं –

असुर, सुर, नाग–नर, यक्ष–गन्धर्व–खग,
रजनिचर, सिद्ध, ये चापि अन्ने।.....

विनयपत्रिका 57/2

सत्संग की महिमा का वर्णन करते हुए तुलसीदास विनयपत्रिका के निम्न पद में कहते हैं कि किस–किस को इन संतों के चरवोदक ने पावन बनाकर कल्याण–पद का भागी नहीं बनाया। वृत्रासुर, बलि, बाणासुर, प्रह्लाद आदि की एक लम्बी सूची गिनाते हैं –

वृत्र, बलि, बाण, प्रहलाद, मय, ब्याध,
गज, गृध्र, द्विजबन्धु निजधर्मत्यागी।.....

विनयपत्रिका 57/3

संत–महात्माओं की संगति जीव के सभी प्रकार के शोक, संदेह, भय, हर्ष, अज्ञान और वासनाओं के समूह को वैसे ही नष्ट कर देती है जैसे रघुनाथ के बाण राक्षसों की सेना को –

यथा रघुनाथ–सायक निशाचर–चमू–
निचय–निर्दलन–पटु–वेग भारी।।.....

विनयपत्रिका 57/7

तुलसीदास संत और भगवंत में कोई भी अंतर नहीं मानते। 'संत भगवंत अंतर निरंतर नहीं,'कहकर दोनों के अंभदेत्व को निरूपित किया है।

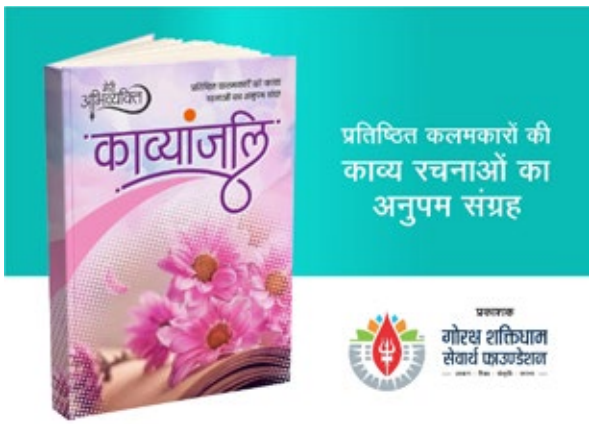

अर्चन वंदन तुम्हें मां भारती

सुजाता प्रसाद
लेखिका,
शिक्षिका सनराइज एकेडमी
मोटिवेशनल ओरेटर
नई दिल्ली

संसार शिरोमणि देश हमारा अमृत महोत्सव मना रहा
पूजे जाते वृक्ष, पर्वत, नदी, हर जीव जहां पर
कंकड़ में बसते हैं शंकर, जन मन में राम कृष्ण
माता पिता गुरुओं की घर घर में होती है पूजा,
पूजनीय पतित पावनी है धरा यहाँ की
अर्चन वंदन तुम्हें मां भारती मां भारती।

दुर्ग हिमालय रक्षक जिसका
सिर पर मुकुट सरीखा सजता है,
पांव पखारता सागर विशाल
बनो धीर गंभीर यह संदेश देता है,
ऋषि मुनियों, साधु संतों की धरती
अर्चन वंदन तुम्हें मां भारती मां भारती।

संजीवनी नदियां रचती अमृत सींचन का संसार
वन उपवन गिरि जंगल हैं इसके सुंदर श्रृंगार
प्रकृति की गोद में बसता भारत देश महान है
झूमते खेत पर्वत पठार मरुस्थल फैला मैदान है
संपन्न समृद्ध है जिसकी भौगोलिक स्थिति
अर्चन वंदन तुम्हें मां भारती मां भारती।

तीज त्योहारों का देश हमारा
है प्राचीन सभ्यता संस्कृति हमारी
वसुधैव कुटुंबकम् बना मंत्र भारत का
अनेकता में एकता, विविध बोली भाषा
कह रहे कहानी भारत के पहचान की
अर्चन वंदन तुम्हें मां भारती मां भारती।

सदियों से भारत भूमि दुनिया की शान है
सोने की चिड़िया था भारत, इतिहास प्रमाण है
जन्मभूमि है यही हमारे वीर वीरांगनाओं की
सीमा सुरक्षा बल सरहद पर तैनात जिसके
है यह तस्वीर अपने गौरव के अभिमान की
अर्चन वंदन तुम्हें मां भारती मां भारती।

है जिसकी आन निराली शान निराली
मातृभूमि हमें है जान से प्यारी
तिलक माटी का शोभे हर मस्तक पर
श्वेत हरा केसरिया ध्वज तिरंगा लहराता रहे
अर्पित है चरणों में प्राणों की आहुति
अर्चन वंदन तुम्हें मां भारती मां भारती।

टूटे नहीं अपना वतन ना विरानगी आए कभी
रहूं मैं कहीं भी मेरी बुनियाद यहीं रहे
अतिथि देवो भव की धरती हमारी
जिसके चप्पे–चप्पे पर श्री वैभव है वारती
बारी बारी आकर ऋतुएं जिसको सदा संवारती,
अर्चन वंदन तुम्हें मां भारती मां भारती।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

श्री रामकथा के अल्पज्ञात दुर्लभ प्रसंग

श्री राम की अँगूठी का रहस्य

डॉ. नरेन्द्र मेहता
स्वतंत्र लेखन
उज्जैन (मध्य प्रदेश)

श्रीराम को १४ वर्ष तक तापस वेष में तथा वन (दण्डकारण्य) में रहने का वरदान कैकेयी ने राजा दशरथ से माँगा था तथा भरत का राज्याभिषेक। श्रीराम तपस्वी के वेष में होने के उपरान्त भी अपने साथ धनुष, बाण, तलवार आदि शस्त्र लेकर वन को गए थे। श्रीराम क्षत्रिय थे अतएव उन्होंने शस्त्र धारण किए। उनके अवतार लेने का उद्देश्य हनुमानजी ने रावण को बताया है। इससे उनके शस्त्र धारण का कारण स्पष्ट हो जाता है।

गो द्विज धेनु देव हितकारी। कृपासिंधु मानुष तनुधारी।।
जन रंजन–भंजन खल ब्राता। बेद धर्म रच्छक सुनु भ्राता।।

श्रीरामचरितमानस सुन्दरकाण्ड ३९ (क) 2

हनुमानजी रावण को कहते हैं कि उन कृपा के समुद्र भगवान (श्रीराम) ने पृथ्वी, ब्राह्मण गौ और देवताओं का हित करने के लिए ही मनुष्य शरीर धारण किया है। हे भाई! सुनिए, वे सबको आनन्द देने वाले, दुष्टों के समूह का नाश करने वाले और वेद तथा धर्म की रक्षा करने वाले हैं। रावण यहाँ हनुमानजी द्वारा अहंकार वश उनकी बात समझ नहीं सका।

यहाँ श्रीराम का तापस वेष में शस्त्रधारण करने का उद्देश्य स्पष्ट हो जाता है। श्रीराम की लीला समझना आसान नहीं है। श्रीराम ने ताड़का राक्षसी का, सुबाहु का वध किया किन्तु मारीच को बिना फलवाला बाण से सौ योजन विस्तारवाले समुद्र के पार गिराया। वे जानते थे कि यदि मारीच का वध कर दिया गया तो सीताहरण कैसे होगा? श्रीराम तापस वेष में अँगूठी धारण करके गए या नहीं कहीं श्रीरामकथा में स्पष्ट नहीं है किन्तु हनुमानजी को सीता के पास अँगूठी देकर दूत बनाकर भेजा था। अतः यह बात ठीक ही है–

राम कीन्ह चाहहिं सोई होई। करै अन्यथा अस नहिं कोई।।

श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड १२८-१

कैकेयी ने राजा दशरथजी से ये दो वरदान माँगे थे–

सुनहु प्रानप्रिय भावत जी का। देहु एक बर भरतहि टीका।।
मांगउ दूसर बर कर जोरी। पुरवहु नाथ मनोरथ मोरी।।
तापस वेष विसेषि उदासी। चौदह बरिस रामु बनवासी।।
सुनि मृदु बचन भूप हियं सोकू। ससि कर छुअत बिकल जिमि कोकू।।

श्रीरामचरितमानस अयोध्याकाण्ड २९-१-२

यहाँ भी श्रीराम के तापस वेष का वर्णन है किन्तु श्रीराम का शस्त्र एवं अंगूठी का कोई स्पष्ट संकेत नहीं है। यदि श्रीराम के हाथ में अँगूठी का वर्णन है तो वह प्रथम बार उनके विवाह के अवसर पर है यथा–

पीत जनेउ महाछबि देई। कर मुद्रिका चोरि चितु लेई।।
सोहत ब्याह साज सब साजे। उर आयत उरभूषन राजे।।

श्रीरामचरितमानस बालकाण्ड ३२७-३

श्रीरामजी की अँगूठी का वर्णन यहाँ न होकर सीताजी की अँगूठी का वर्णन गंगाजी पार करते समय नाव से उतरते समय का है यथा–

प्रिय हिय की सिय जाननिहारी। मुनि मुदरी मन मुदित उतारी।।
कहेउ कृपाल लेहि उतराई। केवट चरन गहे अकुलाई।।

श्रीरामचरितमानस अयोध्याकाण्ड १०२-२

पति के हृदय को जाननेवाली सीताजी ने आनन्द भरे मन से (श्रीराम के कहे बिना) अपनी रत्नजड़ित अँगूठी अंगुली से उतारी। कृपालु श्रीरामचन्द्रजी ने केवट से कहा कि नाव की उतराई ले लो। केवट ने व्याकुल होकर श्रीराम के चरण पकड़ लिए।

केवट ने श्रीराम से कहा हे नाथ! दीनदयाल! आपकी कृपा से अब मुझे कुछ नहीं चाहिए। लौटती बार आप मुझे जो कुछ देंगे, वह प्रसाद मैं सिर पर चढ़ा लूँगा।

यहां श्रीरामजी के हाथ में अँगूठी की चर्चा न होकर सीताजी के हाथ में अँगूठी का वर्णन है। श्रीराम के पास दूसरी बार अँगूठी का वर्णन सीतान्वेषण के समय है। सीतान्वेषण हेतु सुग्रीव ने अंगद, नल, हनुमान आदि प्रधान योद्धाओं को बुलाया और कहा–

सुनहु नील अंगद हनुमाना। जामवंत मतिधीर सुजाना।
सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू। सीता सुधि पूँछेहु सब काहु।।
पाछें पवन तनय सिरु नावा। जानि काज प्रभु निकट बोलावा।।
परसा सीस सरोरूह पानी। करमुद्रिका दीन्हि जन जानी।।

श्रीरामचरितमानस किष्किन्धाकाण्ड २३-१-६

हे धीर बुद्धि और चतुर नील अंगद, जाम्बवान् और हनुमान। तुम सब श्रेष्ठ योद्धा मिलकर दक्षिण दिशा में जाओ और सब किसी से सीताजी का पता पूछना।

सब (अंगद, नल, जाम्बवान आदि) के पीछे पवनसुत श्रीहनुमानजी ने श्रीराम को सिर नवाया। कार्य का विचार करके प्रभु ने उन्हें अपने पास बुलाया। उन्होंने अपने कर-कमलों से उनके सिर का स्पर्श किया तथा अपने सेवक को जानकर श्रीराम ने हनुमानजी को अपने हाथ की अँगूठी उतारकर दी।

इस प्रकार यहाँ स्पष्ट है कि श्रीराम ने हनुमानजी को अयोध्या से ही पहनी हुई अपने हाथ की अँगूठी सीताजी को पहिचान हेतु दी थी। जिसका तापस वेश के साथ कहीं भी वर्णन नहीं पाया गया है।

वाल्मीकि रामायण में श्रीराम का अँगूठी प्रसंग

श्रीमद्वाल्मीकीय रामायण में कैकेयी दशरथजी से दो वरदान माँगे थे–

अनेनै वाभिषेकेण भरतो मेऽभिषिच्यताम्।
नव पञ्चिं च वर्षाणि दण्डकारण्यमाश्रितः।।
चीरा जिनधरो धीरो रामो भवतु तापसः।
भरतो भजतामद्य यौवराज्यकण्टकम्।।

वाल्मीकिरामायण अयोध्याकाण्ड सर्ग ११-२४, २६, २७

यह जो श्रीराम के राज्याभिषेक की तैयारी की गई है, इसी अभिषेक सामग्री द्वारा उसके पुत्र भरत का अभिषेक (राज्याभिषेक) किया जाए। धीर स्वभाववाले श्रीराम तपस्वी वेष में वल्कल तथा मृगचर्म धारण करके चौदह वर्षों तक दण्डकारण्य में जाकर रहें। भरत को आज निष्कण्टक युवराज पद प्राप्त हो जाए।

यहाँ श्रीराम को तपस्वी वेष में १४ वर्ष दण्डकारण्य में जाने का कैकेयी ने दशरथजी से वरदान माँगा था। तद्नन्तर श्रीराम तपस्वी वेश में १४ वर्ष वन में गए किन्तु क्षत्रिय होने के कारण, आत्मरक्षा हेतु धनुष-बाण धारण करके गए थे। साथ ही साथ उनके हाथ में राजा होने के कारण एक उनके नाम की अँगूठी रही होगी, तब ही तो वह अँगूठी का वर्णन किष्किन्धाकाण्ड में हनुमानजी को सीताजी के पास पहिचान हेतु दी गई थी।

सुग्रीव हनुमानजी की बुद्धि एवं शक्ति को अच्छी तरह जानते थे। अतः सुग्रीव ने हनुमानजी को विशेष रूप से सीताजी के अन्वेषण के लिए चुना तथा वह यह भी जानते थे कि हनुमान्जी ही एकमात्र इस कार्य को पूर्ण कर सकते हैं। सुग्रीव ने हनुमानजी से कहा–

न भूमौ नान्तरिक्षे वा नाम्बरे नामरालये।
नाप्सु वा गतिसंग ते पश्यामि हरिपुंगव।।
सासुराः सहगन्धर्वा सनागनदेवताः।
विदतोः सर्वलोकास्ते ससागराधराधरः।।

वाल्मीकि रामायण किष्किन्धाकाण्ड सर्ग ४३-३-४

कपि श्रेष्ठ! पृथ्वी अन्तरिक्ष, आकाश, देवलोक अथवा जल में भी तुम्हारा गति का अवरोध मैं (सुग्रीव) कभी नहीं देखता हूँ। असुर, गन्धर्व, नाग, मनुष्य, देवता, समुद्र तथा पर्वतों सहित सम्पूर्ण लोकों का तुम्हें ज्ञान है।

वीर (हनुमान्जी) महाकपे! सर्वत्र अबाधित गति, वेग, तेज और फुर्ती ये सभी सद्गुण तुममें अपने महापराक्रमी पिता वायु के समान है।

सुग्रीव की यह बात सुनकर श्रीराम को यह तो ज्ञात हो ही गया कि इस सीतान्वेषण कार्य की सिद्धि का सम्बन्ध इसे पूर्ण करने का सारा भार हनुमानजी पर ही है।

ददौ तस्य ततः प्रातः प्रीतः स्वनामांकोप शोभितम्।
अंगुलीयम भिज्ञानं राजपुर्त्याः परंतपः।।

वाल्मीकि रामायण किष्किन्धाकाण्ड सर्ग ४४-१२

तदनन्तर शत्रुओं को संताप देने वाले श्रीराम ने प्रसन्नतापूर्वक अपने नाम के अक्षरों से सुशोभित एक अँगूठी हनुमान्जी के हाथ में दी जो राजकुमारी सीता को पहचान के रूप में अर्पण करने के लिए दी। अँगूठी हनुमान्जी को देकर वे बोले कपि श्रेष्ठ! इस चिह्न के द्वारा जनक किशोरी सीता को यह विश्वास हो जाएगा कि तुम मेरे पास से ही गए हो। इससे वह भय का त्याग कर तुम्हारी ओर देख सकेगी।

महर्षि वाल्मीकिजी ने हनुमानजी का सीतान्वेषण में जो वर्णन किया है वह बड़ा ही रोचक एवं हनुमान्जी के श्रेष्ठ गुणवान, बुद्धिमान, सर्वगुण सम्पन्नता का किया है। वे वार्तालाप शैली में अत्यन्त ही प्रवीण है जो देखते ही बनती है।

अहं ह्यतितनुश्चौव वानरश्च विशेषतः।
वाचं चोदा हरिष्यामि मानुषीमिह संस्कृताम्।
यदि वाचं प्रदास्यामि द्विजातिरिव संस्कृताम्।
रावणं मन्यमाना मां सीता भीता भविष्यति।।
अवश्यमेव वक्तव्यं मानुषं वाक्यमर्थवत्।
मया सान्त्वयितुं शक्या नान्यथेयमनिन्दिता।।

वाल्मीकिरामायण सुन्दरकाण्ड सर्ग ३०-१७-१८-१९

हनुमानजी ने मन ही मन सोचा कि एक तो उनका शरीर अत्यन्त सूक्ष्म है। दूसरे वे वानर हैं। विशेषतः वानर होकर भी वे यहाँ मानवोचित संस्कृत भाषा में बोलेंगे तो ऐसा करने में एक बाधा है, यदि वे द्विज की भाँति संस्कृतवाणी का प्रयोग करेंगे तो सीताजी उन्हें रावण समझकर भयभीत हो जाएंगी। ऐसी दशा में अवश्य ही उन्हें उस सार्थक भाषा का प्रयोग करना चाहिए जिसे अयोध्या के आसपास की साधारण जनता बोलती है, अन्यथा इन सती-साध्वी सीता को मैं उचित आश्वासन नहीं दे सकता।

अंत में सीताजी को उनके हरण के पूर्व से सुग्रीव श्रीराम की मित्रता तक वृत्तांत सुनाया। इससे सीताजी का हनुमानजी पर विश्वास हो सके तब उन्होंने-

वानरोऽहं महाभागे दूतो रामस्य श्रीमतः।
रामनामांकितं वेदं पश्य देव्यगुलीयकम्।

वाल्मीकिरामायण सुन्दरकाण्ड सर्ग ३६-२

महाभागे! मैं परम बुद्धिमान भगवान् श्रीराम का दूत वानर हूँ। देवि! यह श्रीरामनाम से अंकित मुद्रिका है, इसे लेकर देखिए।

इस तरह हम देखते हैं कि श्रीराम के पास अँगूठी थी तथा उन्होंने हनुमानजी के साथ दूत के रूप में भेज दी। श्रीराम का तापस वेश तथा हाथ में अँगूठी में उनके नाम की सुन्दर मुद्रिका होना, उनकी लीला थी उसे हम समझ नहीं सकते हैं।

कन्नड़ तोरवे रामायण में श्रीराम की अँगूठी का प्रसंग

प्रसिद्ध कन्नड़ तोरवे रामायण में श्रीराम का अँगूठी का प्रसंग अपने आपमें एक अलग विशेषता लिए हुए हैं। श्रीराम को दशरथजी ने एक 'राजमुद्रिका' वन गमन के पूर्व दी थी तथा जो उन्हें कहा गया था। वह अन्य श्रीरामकथाओं में एक वर्णन लगभग नहीं प्राप्त होता है। यह प्रसंग यहाँ महर्षि वाल्मीकिजी कुश को सुनाते हुए कहते हैं कि- कैकेयी का क्रोधपूर्ण स्वरूप श्रीराम पहिचान गये।

अपने को कलंकित न होना पड़े इस तरह के विचार करते हुए श्रीराम ने निजी सचिव, मंत्रिगण, पुरजन, परिजन आदि को बुलाकर समयोचित बातों से उन्हें समझाकर, मनवाकर क्रोध तप्त कैकेयी को समझा बुझाकर विनयपूर्ण रीति से प्रणाम किया। उन्होंने कैकेयी से कहा कि आप मेरे बारे में सोच विचार में न पड़े। राजा भरत को बुलवाकर अयोध्या का आधिपत्य सौंप दे। इस तरह निवेदन करते हुए श्रीराम ने पिताजी दशरथजी के चरणों में माथा नवाया।

कंद केलीरेलु वरुषवु संद बलि की नगर विदुनि
न्निंद पालिसी कोललि को मुद्रिकेय नीनंदु
संदणि सुवश्रुगलला निज नंदनन किः वैरलिगिद्दं
तेंदु नुडिदनु वर सुमंत्रगा महीपाला।

कन्नड़ तोरवे रामायण अयोध्याकाण्ड संधि ४-५

दशरथजी ने राम से कहा, 'बेटे चौदह वर्ष की अवधि समाप्त होने पर अयोध्या लौटकर आकर राज्य संभालो। यह लो राज मुद्रिका।' इस तरह कहते दशरथजी की आँखें डबडबा आई, फिर राम को राजमुद्रिका पहनाते हुए सुमंत्र से कहा कि हमारा रत्नमय सुन्दर रथ मँगवाओ। उसमें बैठाकर इन्हें ले जाओ। यदि तुम्हें वापस आने की अनुमति मिले तो आ जाओ। नहीं तो इन्हीं के साथ रहना। अब तुम वन जाओ। यहाँ हम स्पष्ट रूप से देखते हैं कि इस रामायण में श्रीराम को अँगूठी राजा दशरथजी ने 'राजमुद्रिका' के रूप में वन गमन के समय पहनाई थी।

अन्य श्रीरामकथाओं के अनुसार ही श्रीराम ने भी किष्किन्धाकाण्ड की संधि ८ में उनकी अँगूठी हनुमानजी को दी। सुग्रीव ने हनुमान्जी को श्रीराम को सौंप दिया। हनुमानजी ने भी भक्तिभाव से भरकर श्रीराम के चरणों में माथा रखकर प्रणाम किया। 'पीछा कर रहे कष्ट रूपी समुद्र के लिए तू एक बाँध है।' इस तरह हृदयांतराल से प्रीतिपुरस्सर वचन कहते हुए श्रीराम ने हनुमानजी को मंगलकारी राजमुद्रायुक्त अपने नाम की अपनी अँगूठी दे दी।

अरिवुदरि नगरवलि सीतेय कुरुहनुदित पतिव्रतागुण
मेरेदिरलु मुगलीवुदी निजराज मुद्रिकेय
कुरु हिग लनिव हेलवदु येदरुहि केलवनु बीलु कोट्टनु
मरेय मायानरनु नरवो लंजना सुतन

कन्नड़ तोरवे रामायण किष्किन्धाकाण्ड संधि ८-१८

श्रेष्ठ पतिव्रता गुणों से सम्पन्न सुशोभित सीताजी को शत्रु की राजधानी में पहुँचकर पहिचानो। तत्पश्चात् यह मेरी राजमुद्रांकित, अँगूठी उसे दे देना। फिर परिचय के रहस्य सीता से कहो इस तरह कहते हुए मायानर श्रीराम ने साधारण मानव की तरह पहिचान के कुछ रहस्य हनुमानजी को समझाकर उन्हें रवाना किया।

सीताजी को सांत्वना देकर त्रिजटा पहरे पर नियुक्त स्त्रियों सहित सो गई। उस समय कमलमुखी सीताजी अपनी चिन्ता को त्यागने में असमर्थ हो पति के बारे में सोचते हुए व्याकुल थीं, तब हनुमानजी पेड़ की डाली पर से बोले– देवीजी आपके पति के श्रीचरण कुशलमंगल सम्पन्न अत्यन्त क्षेमपूर्वक है। लक्ष्मण देव बल सम्पन्न हैं। पराक्रमी कपियों के राजा कुशलपूर्वक हैं। इन तीनों ने मुझे गुप्त रीति से आपका कुशलमंगल जानने यहाँ भेजा है। पतिव्रता के चरणकमलों का दर्शन भाग्य से मुझे प्राप्त हुआ। तत्पश्चात् हनुमानजी ने रावण द्वारा उनके हरण तथा रावण द्वारा जटायु को मरणासन्न अवस्था में छोड़ जाने तक का वर्णन किया। ऐसा कहकर हनुमानजी उस सुन्दर वृक्ष पर से उतर कर उन्होंने सीताजी के चरणों में माथा टेका। तब भूमिसूता (सीताजी) डर के मारे भयभीत हो गई। तब हनुमानजी ने कहा माँ आप भयभीत क्यों हैं। मैं तो असुरारि (श्रीराम) का सेवक हूँ। अंजनादेवी का पुत्र हूँ। मेरा नाम हनुमान है। हम भयानक रूप धारण करने वाले नहीं हैं। अतरू आप डरिये मत। सीताजी ने कहा, तुम तो कपि हो श्रीराम राजा हैं। यह स्वामी सेवक का सम्बन्ध कैसा हो सकता है।

हनुमानजी ने सीताजी को जयन्त (कौआ) का वृत्तांत बताया, अत्रि महर्षि के आश्रम में ठहरने आदि का वृत्तांत कह सुनाया, कपट स्वर्ण मृग की कथा भी कही, सीताजी प्रत्युत्तर नहीं दे पा रही थी। हनुमानजी ताड़ गए। ऐसा सोच विचार करके हनुमानजी ने श्रीराम की रत्नजड़ित राजमुद्रांकित अँगूठी सीताजी को दे दी। सीताजी यह देखकर प्रसन्न हो गई।

इस तरह श्रीराम की रत्नजड़ित राजमुद्रांकित अँगूठी का यह वर्णन इस रामायण में दिया गया है कि महाराज दशरथजी ने श्रीराम को यह अँगूठी वनगमन के समय दी थी। वह राजमुद्रांकित अँगूठी यहाँ श्रीराम ने पहिचान के रूप में हनुमानजी द्वारा सीताजी को भेजी थी। इस रामायण में श्रीराम की अँगूठी का रहस्य स्पष्ट दिखाई देता है।

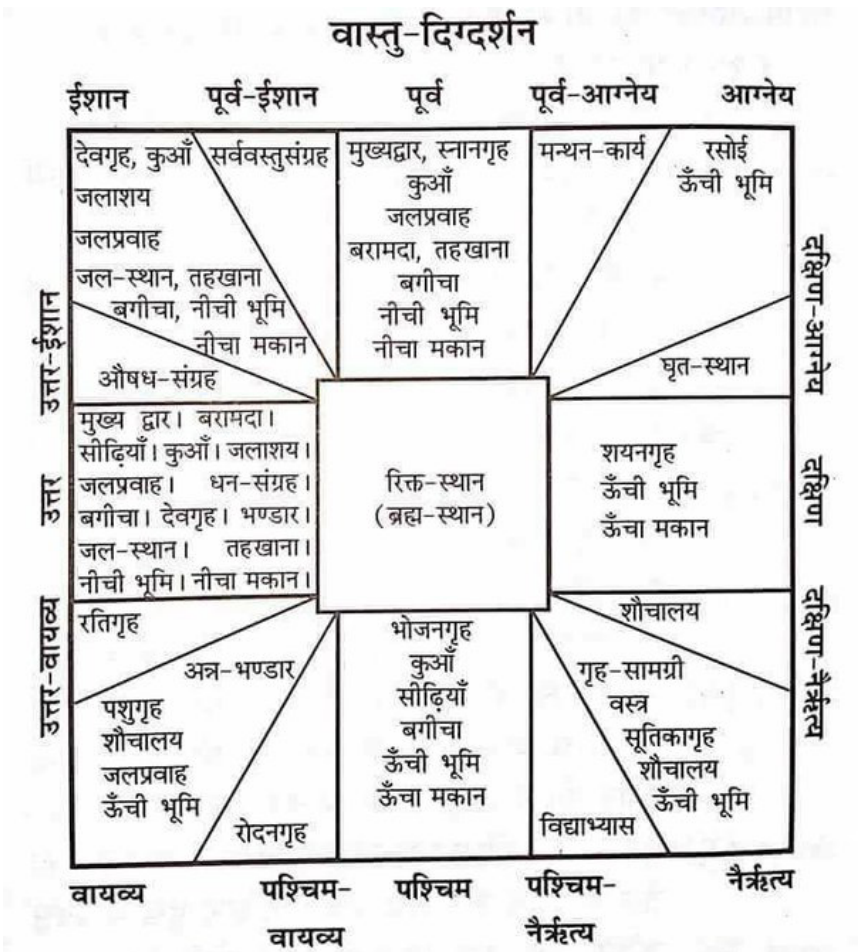

स्वतंत्रता सेनानियों में सिरमौर

सुभाष चंद्र बोस

डॉ. सन्तोष खन्ना
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
वरिष्ठ साहित्यकार एवं प्रधान संपादक :
महिला विधि भारती त्रैमासिक पत्रिका
दिल्ली–110088

भारत के स्वतंत्रता संग्राम में हिस्सा लेने वालों में सिरमौर स्वतंत्रता सेनानी नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने भारत के भीतर लगभग बीस वर्ष तक स्वाधीनता संग्राम की गतिविधियों में भाग लेकर कई प्रकार की अपनी छाप छोड़ ही, परंतु जब अंततः उन्होंने कांग्रेस को छोड़कर देश से बाहर विदेश में स्वाधीनता संग्राम की अलख जगाई, वह देश को आजाद कराने का उनका योगदान स्वयं में अद्‌भुत, अद्वितीय और अनुपम रहा। चाहे स्वतंत्र भारत के कर्णधार उनके अवदान को नकार की नियति पर चल रहे थे परंतु सूर्य जब गगन को उद्‌भासित करता है तो उसके वर्चस्व को अधिक देर तक नकारा नहीं जा सकता। आज देश के जन–जन में जो स्थान और श्रद्धा नेताजी सुभाष चंद्र बोस के लिए है वह शायद किसी और अन्य स्वतंत्रता सेनानी के लिए ही हो।

नेताजी सुभाष चंद्र बोस का जन्म 23 जनवरी, 1897 को उड़िया के शहर कटक में एक हिंदू कायस्थ परिवार में हुआ। उनके पिता जानकीनाथ बोस शहर के प्रसिद्ध वकील थे । उन्होंने कटक की महापालिका में लंबे समय तक कार्य किया और वह बंगाल विधानसभा के सदस्य भी रहे। सुभाष चंद्र बोस की माता प्रभावती देवी कोलकाता के एक कुलीन परिवार से थी। सुभाष चंद्र बोस कटक के प्रोटेस्टेंट स्कूल से प्राइमरी शिक्षा ग्रहण कर 1909 में उन्होंने रेवेनशा कॉलेजिएट स्कूल में दाखिला लिया। 1915 में उन्होंने इंटरमीडिएट की परीक्षा पास कर जब 1916 में दर्शनशास्त्र (ऑनर्स) बीए कर रहे थे तो प्रेसिडेंसी कॉलेज में अध्यापकों और छात्रों में हुए झगड़े के कारण उन्हें एक वर्ष के लिए कॉलेज से निष्कासित कर दिया गया। बाद में उन्होंने 1919 में बीए (ऑनर्स) प्रथम श्रेणी में पास किया और कलकत्ता विश्वविद्यालय में उन्होंने चौथा स्थान प्राप्त किया। वे 1919 में आईसीएस परीक्षा के लिए इंग्लैंड चले गए जहां उन्होंने 1920 में इस परीक्षा में वरीयता सूची में चौथा स्थान प्राप्त कर लिया। बाद में जब उन्हें

लगा कि उनके जीवन का ध्येय आईसीएस बन कर अंग्रेजों की गुलामी करना नहीं तो उन्होंने आईसीएस पद से त्यागपत्र दे दिया और वह भारत लौट आए।

सुभाष चंद्र बोस भारत वापस आने के बाद उस समय के कोलकाता के स्वतंत्रता सेनानी देशबंधु चितरंजन दास के साथ काम करना चाहते थे। रविंद्र नाथ टैगोर की सलाह पर सुभाष चन्द्र बोस पहले मुंबई में 20 जुलाई, 1921 को महात्मा गांधी से मिले। महात्मा गांधी ने उन्हें देशबंधु चितरंजन दास के पास भेज दिया। उन दिनों महात्मा गांधी असहयोग आंदोलन चला रहे थे। सुभाष चंद्र बोस कोलकाता में चितरंजन दास के नेतृत्व में असहयोग आंदोलन में सहभागी हो गए। किंतु चौरी चौरा कांड के बाद जब गांधी जी ने असहयोग आंदोलन स्थगित कर दिया तो अनेक स्वतंत्रता सेनानी गांधी जी के असहयोग आंदोलन के स्थगन से नाराज हो गये। इसी कारण चितरंजन दास ने भी गांधी जी से स्वयं अलग कर लिया और उन्होंने 1922 में अपनी एक अलग पार्टी स्वराज पार्टी की स्थापना कर ली और इस पार्टी से उन्होंने कोलकाता महापालिका के लिए चुनाव लड़ा और वह कोलकाता के महापौर बन गए। उन्होंने सुभाष चंद्र बोस को महापालिका का मुख्य कार्यकारी अधिकारी बना दिया। सुभाष चंद्र बोस ने कलकत्ता महापालिका में अपने कार्यकाल के दौरान महापालिका का पूरा ढांचा ही बदल डाला । उन्होंने कोलकाता के सभी रास्तों के अंग्रेजी नाम बदलकर सभी भारतीय नाम कर दिए और स्वतंत्रता संग्राम में प्राण न्योछावर करने वालों के परिवार वालों को वहां नौकरी पर रखा जाने लगा। अंग्रेजी साम्राज्य के उस काल में सुभाष चंद्र बोस ने अवसर मिलते ही कोलकाता में अंग्रेजी नामों के स्थान पर भारतीय नाम रख दिए। इस संबंध में अगर हम स्वतंत्र भारत में देश का शासन चला रहे कर्णधारों को देखें तो उन्होंने गुलामी के इस प्रकार के चिन्हों से मुक्ति पाने का कोई प्रयास नहीं किया। हां, जब से नरेंद्र मोदी प्रधानमंत्री बने हैं उन्होंने इस संबंध में कई प्रयास किए हैं । यही नहीं, उन्होंने 15 अगस्त, 2022 को लाल किले की प्राचीर से भारत को आगे बढ़ाने के लिए जिन पांच प्रण का उल्लेख किया, उनमें देश के लोगों को गुलामी के अहसास से मुक्त करने पर जोर दिया।

प्रायः कहा जाता है कि यदि नेता जी सुभाष चन्द्र बोस को स्वतंत्र देश की बागडोर संभालने का अवसर मिला होता तो देश की तस्वीर कुछ और ही होती। अगर हम यह याद करें कि उन्होंने कोलकाता की महापालिका का कार्यकारी मुख्य अधिकारी बन कर जैसे उसका ढांचा बदल कर रख दिया और कलकत्ता के रास्तों का भारतीयकरण कर दिया, उसी से अनुमान लगाया जा सकता है कि वह कैसा भारत बनाना चाहते थे।

सुभाष चंद्र बोस ने वर्ष 1921 से लेकर 1939 तक कांग्रेस में रहकर देश को स्वतंत्र कराने के लिए सभी प्रकार की गतिविधियों में भाग लिया जिसके कारण इन वर्षों में अंग्रेजों ने उन्हें 11 बार जेल की सजा दी । देखा जाये तो महात्मा गांधी को स्वतंत्रता संग्राम के 27 वर्षों में ग्यारह बार जेल भेजा गया और जवाहर लाल नेहरू को 25 वर्ष में नौ बार जेल भेजा गया जबकि नेता जी सुभाष चन्द्र बोस को लगभग बीस बर्ष में ही ग्यारह बार जेल भेजा गया, इससे स्वतंत्रता संग्राम में उनकी अति सक्रियता का पता चलता है। पहली बार वह 16 जुलाई, 1921 को जेल गए थे जब उन्हें 6 महीने जेल में रहना पड़ा था। दूसरी बार 1925 में उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और बिना मुकदमा चलाए बर्मा की माण्डले जेल में भेज दिया गया। जब 5 नवंबर, 1925 को चितरंजन दास जी का निधन हुआ तो यह खबर सुनकर सुभाष चंद्र बोस की तबीयत बहुत बिगड़ गई किंतु उन्हें अंग्रेज सरकार ने जेल से रिहा नहीं किया। बाद में उनकी जब तबीयत ज्यादा खराब हुई तो सरकार ने उन्हें रिहा करने की यह शर्त रखी कि वह इलाज के लिए यूरोप चले जाएं, किंतु सुभाष चंद्र बोस ने यह शर्त नहीं मानी। बाद में जब उनकी हालत और अधिक बिगड़ने लगी तो ब्रिटिश सरकार कौ उन्हें जेल से रिहा करना पड़ा। रिहाई के बाद वह इलाज के लिए डलहौजी चले गए किंतु उसके कुछ दिनों के बाद उन्हें पुनः गिरफ्तार कर लिया गया ।

1930 में भी वह जेल में बंद थे और वहीं से उन्होंने कोलकाता महापालिका के मेयर का चुनाव लड़ा और वह जीत गए तो सरकार को उन्हें रिहा करना पड़ा। 1932 में सुभाष चंद्र बोस को पुनः गिरफ्तार कर अल्मोड़ा जेल भेज दिया गया जहां उनकी तबीयत खराब हुई तो इस बार सुभाष चंद्र बोस डॉक्टर की सलाह पर यूरोप चले गए। अपने यूरोप प्रवास के दौरान उन्होंने वहीं से भारत की स्वतंत्रता के लिए कई प्रकार के प्रयास करने आरम्भ कर दिया ये। इसी दौरान अपनी एक पुस्तक लिखने के संबंध में उनकी मुलाकात एमिली सेंटर से हुई, बाद में जब वे पुनः यूरोप आये तो उन्होंने वर्ष 1942 में एमिली सेंटर से आस्ट्रिया में हिंदू रीति रिवाज से विवाह कर लिया । उनकी जब बेटी पैदा हुई तो सुभाष चंद्र बोस ने उसका नाम अनीता बोस रख दिया। अपने उसी यूरोप निवास के दौरान अपने पिता की बीमारी की खबर पा वह भारत लौट आए।

वर्ष 1928 में सुभाष चंद्र बोस को कांग्रेस अध्यक्ष के लिए चुना गया किंतु महात्मा गांधी के साथ उनके मतभेद हो जाने से जब पुनः अध्यक्ष पद का चुनाव था तो महात्मा गांधी उन्हें अध्यक्ष नहीं बनाना चाहते थे किंतु चुनाव में वह अध्यक्ष का पद जीत गए। फिर स्थितियां ऐसी बनी कि उन्हें कांग्रेस के अध्यक्ष पद से इस्तीफा देना पड़ा और तब उन्होंने अपने द्वारा स्थापित फॉरवर्ड ब्लॉक के अंतर्गत स्वतंत्रता संग्राम के लिए गतिविधियां तेज कर दी और जब अगले वर्ष कोलकाता में गुलामी के प्रतीक हारवेट स्तंभ को सुभाष चंद्र बोस की यूथ ब्रिगेड ने मिट्टी में मिला दिया तो अंग्रेज सरकार ने फॉरवर्ड ब्लॉक के कई नेताओं के साथ सुभाष चंद्र बोस को भी गिरफ्तार कर जेल में डाल दिया। सुभाष चंद्र बोस ने जेल में अमरण अनशन आरंभ कर दिया तो उनकी तबीयत खराब होने के कारण ब्रिटिश सरकार ने उन्हें जेल से तो रिहा कर दिया किंतु उन्हें उनके घर पर नजरबंद कर दिया गया और बाहर पुलिस का सख्त पहरा लगा दिया गया। इन सबके बावजूद, सुभाष चंद्र बोस ने नजरबंदी के दौरान एक पठान का वेश बनाकर पुलिस को चकमा देकर भारत छोड़ दिया।

तब आरंभ हुआ सुभाष चंद्र बोस का भारत से बाहर विदेशी धरती से स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास जो स्वयं में एकदम अनूठा एवं अद्वितीय है। अफगानिस्तान से होते हुए वे कई प्रकार के वेश बनाकर अंततः जर्मनी पहुंच गए। जर्मन प्रवास के दौरान उन्होंने भारतीय स्वतंत्रता संगठन बनाया और आजाद हिंद रेडियो की स्थापना की। वही वे 29 मई, 1942 को जर्मन के सर्वाधिक सर्वोच्च नेता एडोल्फ हिटलर से मिले पर जब उन्होंने महसूस किया कि हिटलर को भारत में विशेष रुचि नहीं तो उन्होंने जर्मनी छोड़ दिया और वहां से किसी तरह जापान पहुंच गए। जापान रहकर उन्होंने आजाद हिंद फौज की स्थापना की। सिंगापुर में उन्होंने 21 अक्टूबर, 1943 को स्वाधीन भारत के लिए अंतरिम सरकार की स्थापना की जिसके वे स्वयं ही राष्ट्रपति और प्रधानमंत्री बन गए। इस अंतरिम सरकार को कुल 9 देशों ने मान्यता दे दी। नेताजी आजाद हिंद फौज के प्रधान सेनापति भी बन गए। आजाद हिंद फौज ने जापानी सेना के सहयोग से भारत पर आक्रमण कर अंडेमान और निकोबार द्वीप समूह को आजाद करा लिया और सुभाष चंद्र बोस ने वहां पर राष्ट्रीय ध्वज फहराया । दोनों सेनाओं ने मिलकर इंफाल और कोहिमा पर आक्रमण कर दिया परंतु अंग्रेजों का पलड़ा भारी होने पर आजाद हिंद फौज और जापानी सेना को पीछे हटना पड़ा। कहा जाता है कि जापान ने अपनी हार के कारण नेताजी को बचाने के लिए उन्हें बोंबर हवाई जहाज से जापान के बाहर भेज दिया था किंतु यही बोंबर क्रश हो गया जिसमें कथित रूप से नेताजी की 18 अगस्त, 1945 को मृत्यु हो गई। नेताजी की कथित रूप से वर्ष 1945 में मृत्यु हो गई किंतु उनकी मृत्यु का रहस्य अभी तक रहस्य ही बना हुआ है हालांकि उनकी मृत्यु की गुत्थी को सुलझाने के लिए भारत में कई आयोग बनाए गए किंतु उनकी मृत्यु की गुत्थी अनझुलझी ही रह गई है। भारत की जनता को निश्चित रूप से अभी भी पता नहीं चला कि नेताजी सुभाष चंद्र बोस के साथ वास्तव में हुआ क्या? भारत सरकार की अभिरक्षा में कुछ गोपनीय फाइलें बताई जाती हैं उन्हें अभी तक सार्वजनिक नहीं किया गया। पता नहीं यह फाइलें नेता जी के बारे में स्वयं में क्या राज छिपाए हैं?

नेताजी सुभाष चंद्र बोस भारत के स्वतंत्रता सेनानियों के सिरमोर हैं। उन्होंने भारत में रहकर 20 वर्ष तक स्वतंत्रता संग्राम में बढ़ चढ़कर हिस्सा लिया। उनका भारत में रहकर स्वतंत्रता संग्राम में योगदान ना तो जवाहरलाल नेहरू से कम है और ना ही महात्मा गांधी से क्योंकि अगर महात्मा गांधी 11 बार जेल में भेजे गए तो सुभाष चंद्र बोस को भी ब्रिटिश सरकार ने गिरफ्तार कर 11 बार जेल भेजा था। जवाहरलाल नेहरू को तो केवल 9 बार जेल भेजा गया था। इन सब स्वतंत्रता सेनानियों से सुभाष चंद्र बोस का स्वतंत्रता संग्राम में सबसे अधिक अवदान है क्योंकि उन्होंने 1940 से लेकर 1945 तक देश से बाहर रहकर देश को आजाद कराने का जो योगदान दिया वैसा योगदान किसी और स्वतंत्रता सेनानी के नाम नहीं है। उन्होंने देश के बाहर जाकर आजाद हिंद फौज का गठन किया, स्वतंत्रता भारत की अंतरिम सरकार का गठन किया जिसे विश्व के 9 देशों ने मान्यता दे दी थी। साथ ही उन्होंने देश के ब्रिटिश सरकार के अधीन अंडेमान और निकोबार को आजाद करवा वहां भारतीय ध्वज फहराया। यदि जापान पर अमेरिका ने परमाणु बंब न बरसाते होते तो शायद जपान हारता नहीं और इतिहास कोई और ही करवट लेता।

वैसे भी अपने देश में रहकर अहिंसा आंदोलन अथवा हिंसक आंदोलन चलाना शुगम हो सकता है किंतु विदेश में रहकर देश को आजाद कराने के लिए जिस प्रकार की जटिल गतिविधियों को नेताजी सुभाष चंद्र बोस ने अंजाम दिया वह स्वयं में बहुत कठिन कार्य था किंतु सुभाष चंद्र बोस ने यह करिश्मा कर दिखाया। उन्होंने देशवासियों को विदेशी धरा से प्रेरणा देने के लिए दो नारे दिये। एक नारा था 'तुम मुझे खून दो, मैं तुम्हें आजादी दूंगा।' आजादी दी नहीं जाती, आजादी ली जाती है । दूसरा नारा दिया था 'दिल्ली चलो' ।

अब तक तो देश के सभी लोग नेताजी सुभाष चंद्र बोस के स्वतंत्रता संग्राम में अद्भुत योगदान से परिचित हो चुके हैं और अब वह यह भी महसूस करते हैं पिछली सरकारों ने उनके अवदान को कोई महत्व और मान्यता नहीं दी थी। जैसे कहा जाता है कि स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री जवाहरलाल नेहरू थे जबकि वस्तुस्थिति यह है स्वतंत्र भारत के अंतरिम सरकार के पहले प्रधानमंत्री सुभाष चंद्र बोस थे। खैर, देर से ही सही वर्तमान सरकार ने नेताजी सुभाष चंद्र बोस के अवदान को कुछ सीमा तक मान्यता दी है। भारत के वर्तमान प्रधानमंत्री श्री नरेंद्र मोदी ने इंडिया गेट पर नेताजी सुभाष चंद्र बोस की मूर्ति का अनावरण कर दिया है। राजपथ से कर्तव्य पथ बनते ही वहां पर नेताजी की मूर्ति नई दिल्ली की नई शान बन गई है। ये शान 100 सालों तक मजबूती से ऐसे ही खड़ी रहने वाली है। यह प्रतिमा अरुण योगीराज ने तैयार की है जो नेताजी की यह विशाल प्रतिमा भारत में सबसे ऊंची हस्तनिर्मित मूर्तियों में से एक है।

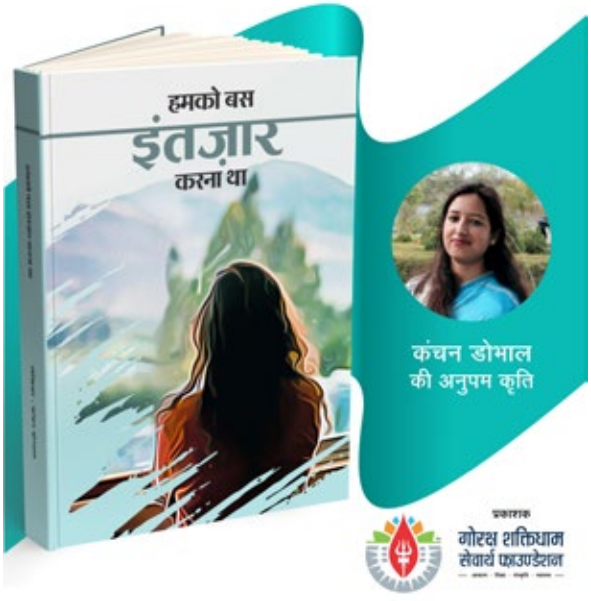

वृद्धजनों की उपेक्षा क्यों ?

डॉ. विद्यासागर मिश्र 'सागर'
सेवानिवृत्त प्रधानचार्य
लखनऊ, उत्तर प्रदेश

आज के आधुनिक परिवेश में देश तेजी से सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक परिवर्तन के दौर से गुजर रहा है ,समाज का हर वर्ग उन्नति के शिखर पर आसीन होना चाहता है। शिक्षा के प्रचार और प्रसार के कारण सभी के रहन सहन, खान पान एवं विचारों में बहुत बड़े बदलाव आने लगे जिसके वशीभूत होकर प्रत्येक व्यक्ति सुख सुविधाओं से परिपूर्ण स्वतंत्र जीवन जीने की चाहत रखने लगा।इसी विचारधारा के चलते आज की युवा पीढ़ी परम्परागत संस्कारों एवं सांस्कृतिक विरासत को दकियानूसी मान्यताएं कह कर उनकी उपेक्षा करने लगा जिसके परिणाम स्वरूप परिवार रुपी संस्था बिखरने लगी, जिसका सर्वाधिक दुष्प्रभाव वद्ध जनों पर हुआ क्योंकि वे इस परिवर्तन को आत्म सात नहीं कर पाए या कहें कि आधुनिकता की इस अन्धी दौड़ में वे युवा पीढ़ी के साथ सामंजस्य नहीं बना पाये फलतः वृद्ध जनों के सम्मान एवं देखभाल में अतिशय कमी आने लगी और समाज के साथ समन्वय न कर पाने के कारण उन्हें अनेक समस्याओं से जूझना पड़ा। वृद्धजन उम्र बढ़ने के साथ–साथ शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक रूप से कमजोर हो जाते हैं फलतः वे दूसरो पर आश्रित हो जाते हैं , समाज में उनका स्थान एवं भागीदारी नगण्य होने लगती है और उपेक्षा का शिकार हो कर परिवार के लिए बोझ महसूस होने लगते हैं। इस समस्या के निराकरण के हेतु वृद्धाश्रम संस्कृति ने अपने पैर पसारना शुरू कर दिया। अपनी जिम्मेदारी से मुक्ति पाने के लिए लोगों ने अपने बुजुर्गो को वृद्धाश्रम का रास्ता दिखा दिया।

प्राचीन काल में भारतीय संस्कृति में वृद्ध जनों को विद्वता एवं जीवन के अनुभव का खजाना माना जाता था साथ ही समाज में इन्हें अत्यन्त उन्नत एवं सम्मानीय स्थान प्राप्त हुआ करता था। वे अपने परिवार के मुखिया होते थे ,परिवार का कोई भी निर्णय उनकी सलाह और अनुमति के बिना नहीं होता था, उन्हीं की सत्ता एवं प्रभाव के माध्यम से परिवार रुपी संस्था का सफल संचालन होता था। परम्परागत रूप में हर संस्कृति के वृद्ध जनों की देखभाल उनके बच्चे एवं परिवार करता था ।यद्यपि आज भी बहुत से परिवारों में यह परम्परा यथावत है।

आधुनिक भौतिकवादी युग में वृद्ध जनों की समस्याएं निरन्तर बढ़ती जा रही हैं, विडंबना है कि पूरे परिवार को एक बरगद के वृक्ष की तरह स्वयं ताप सहकर शीतल छांव प्रदान करने वाला व्यक्ति वृद्धावस्था में स्वयं को नितांत अकेला, असहाय एवं पराश्रित महसूस करने लगता है, अपने संपूर्ण जीवन में अपने मन, कर्म एवं वचन से परिवार को सुविधा, सुरक्षा एवं प्यार देने के बदले वृद्धावस्था में स्वयं या तो अपने ही घर के किसी कोने में बंद हो जाता है अथवा अस्पताल या वृद्धाश्रम में अपने अंतिम समय की प्रतीक्षा करता रहता

है, यह अत्यंत दुख की बात है कि आधुनिक उपभोक्ता संस्कृति एवं सामाजिक मूल्यों के निरन्तर क्षरण के कारण ही इन विकट स्थितियों का उद्‌भव हुआ है।

आज के वैश्विक समाज में वृद्धजनों को अनुत्पादक, उन्नति में बाधक एवं एक अनचाही जिम्मेदारी के रूप में देखा जाता है क्योंकि आज की पीढ़ी उनकी कीमत न समझकर उनका अनादर करती रहती है परन्तु सच तो यह है कि जैसे बिना जड़ के कोई वृक्ष फलीभूत नहीं हो सकता है उसी प्रकार समाज में बिना वृद्धजनों को साथ लिए हुए संस्कृति एवं संस्कार के पुष्प पल्लवित नहीं हो सकते हैं। वृद्ध जनों की उपेक्षा के और भी कई कारण हैं जैसे पश्चिमी सभ्यता के अन्धानुकरण, संसाधनों की कमी है एवं संकुचित विचारधारा आदि भी है परन्तु विश्वास मानिये कि वृद्धजनों की उपेक्षा का अर्थ है जीवन में ज्ञान व अनुभव का अभाव और वृद्धावस्था को भार समझने का मतलब है शरीर धारण को ही भार मानना, क्योंकि वृद्ध स्वयं साक्षात देवता का स्वरूप होते हैं साथ ही वे हमारी बहुमूल्य सभ्यता एवं संस्कृति की धरोहर है और समाज की मेरुदंड हैं । इनकी सेवा से आशीर्वाद एवं मार्गदर्शन मिलता है हमें नहीं भूलना चाहिए कि वृद्धावस्था जीवन का एक आवश्यक पड़ाव है और इस दौर से हर व्यक्ति को गुजरना है अतः वृद्धजनों की सेवा कर उनकी पीड़ा को महसूस करने की आवश्यकता है।

वृद्धों को इन समस्याओं से निजात दिलवाना भी युवा पीढ़ी के ही हाथों में हैं। पुत्र– पुत्री दोनों का कर्तव्य है कि वे अपने माता–पिता को सम्मान दें, उनकी शारीरिक, मानसिक एवं आर्थिक आवश्यकताओं का ध्यान रखे एवं उनके साथ कुछ समय अवश्य व्यतीत करें। यदि बच्चे अपने माता पिता से दूर रहते हो तो प्रतिदिन उनसे फोन पर बातचीत अवश्य करे, साथ ही सप्ताह अथवा माह में एक बार अवश्य मिलने जाए और साथ में बच्चों को भी ले जाए, सच मानिये कि आपके माता–पिता आप सबको अपने पास पाकर खुशी से झूम उठेगें साथ ही बच्चों के लिए भी इससे सुन्दर उपहार नहीं होगा, फलतः परिवार में पारस्परिक प्रेम और आत्मीयता प्रगाढ होगी।

हमारे संविधान में वृद्ध जनों को पूर्ण सुरक्षा एवं संरक्षण प्रदान किया गया है जिसमें उनके कानूनी अधिकारों एवं संवैधानिक अधिकारों की जानकारी उपलब्ध है इसके अंतर्गत पेंशन, सामाजिक सुरक्षा एवं बीमा के अधिकार निहित हैं। पेंशन के अभाव में वृद्ध जनो को वृद्धावस्था भत्ता एवं रोजगार की उपलब्धता भी है। बीमारी एवं विकलांगता की स्थिति में भी सरकारी सहायता इनको प्राप्त हो जाती है। कानून कहता है माता पिता की देखभाल करना बच्चों का नैतिक कर्तव्य है, वे उनकी आवश्यकता पर ध्यान दें, उन्हें सम्मान दें तथा परिवार के सदस्य उनके साथ थोड़ा समय अवश्य बिताएं और उनके अनुभवों का लाभ उठाएं। साथ ही बुजुर्गों से निवेदन है कि वे अपने अगली पीढ़ी के साथ सहयोग एवं सौहार्दपूर्ण व्यवहार बनाए रखे क्योकि उनके बच्चों के जीवन में भी संघर्षो और चुनौतियों की कमी नहीं है। सच मानिये यदि आज की युवा पीढ़ी अपने बुजुर्गों के सहयोग एवं आशीर्वाद के साथ अपनी कुशलता एवं योग्यता से आगे बढ़ेगी तो सफलता उनके कदम चूमेगी और अनेको सामाजिक बाधाओं से उन्हें मुक्ति भी मिल सकती है साथ ही हमारे सामाजिक कलंक बने वृद्धाश्रम के स्थान पर खुशियों से परिपूर्ण परिवार होगा जिसमें दादी की कहांनियां और बाबा का प्यार एवं बच्चों की किलकारियां भी सुनाई पड़ेगी।

रिश्तों का मनोविज्ञान

विजय कुमार तिवारी
(कवि, लेखक, कहानीकार,
उपन्यासकार, समीक्षक)
भुवनेश्वर, ओडिशा

कोई सुखी है,आनंद में है, तो इसलिए कि उसने अपने रिश्तों की वस्तु–स्थिति को समझ लिया है, रिश्तों के महत्व को जानता है और सजग रहते हुए निभाने की कोशिश करता है। इससे इतर कोई दुखी है, पीड़ित है,तो इसलिए कि उसने अपने रिश्तों के मनोविज्ञान को ठीक तरह समझा नहीं है। ऐसे में सबसे जरूरी है कुछ मूलभूत शब्दावलियों को ठीक से समझना जिसमें 'रिश्ता' भी एक है। रिश्ता बहुत व्यापक शब्द है। विस्तार की दृष्टि से देखिए तो यह ईश्वर तक जाता है,सम्पूर्ण सृष्टि से जोड़ता है या वहीं तक सीमित रह जाता है जिन्हें हमारा मन स्वीकार करता है। सारा रहस्य परिभाषाओं का है,हमारे मन का है और हमारी चिन्तन–दृष्टि का है। सुविधा के लिए या समझने के लिए रिश्तों को प्रत्यक्ष–अप्रत्यक्ष, समीप–दूर,अपने–पराये कई तरह से विचार किया जा सकता है।

सबसे सरल व व्यापक है,सम्पूर्ण सृष्टि को अपना मानना और तदनुसार व्यवहार करना। कोई पराया नहीं है,ऐसा विचार आते ही हमारी सारी मांसपेशियाँ शिथिल, सहज हो जाती हैं, हृदय सामान्य गति से,बिना किसी तनाव के धड़कता रहता है, डर या भय जैसी भावनाएं तिरोहित हो जाती हैं और हमारा जीवन सहज,शांत हो जाता है। हम सहजता से इसे जीवन में उतार लेते हैं,स्वीकार कर लेते हैं तो हमारा जीवन स्थायी तौर पर सरल,सहज और शांत हो जाता है। यह अवस्था विरले लोगों की हो पाती है। होती भी है, तो तभी तक, जब तक हमारा मन–चिन्तन सधा रहता है,साथ देता है। हर व्यक्ति को चाहिए कि वह स्थायी भाव में रहने का अभ्यास करे और सतत लगा रहे। धीरे–धीरे मन स्वीकार करने लगता है और सहज हो जाता है।

रिश्ते प्रतिक्रिया करते हैं और हमारी सहजता को भंग करते हैं। रिश्ते अधिकार जताते हैं और हमें चैन से बैठने नहीं देते। रिश्ते बहुत सहजता से जुड़ते हैं और हमें किसी दूसरी दुनिया में खींच ले जाते हैं,हम खींचे चले जाते हैं,स्वयं को रोक नहीं पाते,भले ही असहज हो रहे होते हैं। कभी–कभी परिस्थितियाँ जटिलताएं पैदा करती है और हमारी सहजता प्रभावित होने लगती है। स्वयं को सहज बनाये रखने के लिए हमें ही तत्पर रहना होगा। हम जैसे मौसम के अनुसार अपनी दिनचर्या,खान पान,रहन–सहन,पहनावा बदलते रहते हैं,वैसे ही रिश्तों के इस जटिल संसार में अपनी स्थिति, बातचीत, सम्बन्ध– निर्वाहन, मिलना–जुलना, देना–लेना सब कुछ सुव्यवस्थित कर सकते हैं। इतनी तत्परता तो होनी ही चाहिए कि कोई हमारी सहजता में खलल न डाल सके। हम स्वस्थ हैं,सहज हैं,हमारी स्थिति–परिस्थिति अनुकूल है,तभी हम अपने रिश्तों को ठीक से सम्हाल पाते हैं।

यदि हम सांसारिक जीवन में हैं तो रिश्ते होंगे ही। रिश्तों से ही हमारा संसार है। हमारे रिश्ते हमें सम्बल देते हैं,सुरक्षा देते हैं और सहयोग करते हैं। हम रिश्तों की एक ऐसी दुनिया में होते हैं जहाँ निर्भयता है,किसी के साथ होने का अहसास है,सुख है,शांति और सहजता है। रिश्तों की आदर्श स्थिति तभी है जब सब कुछ सहज,शांत और सुखद हो। इसके लिए हमें

तत्पर रहना चाहिए। सर्वाधिक महत्वपूर्ण है,हमें ध्यान रखना चाहिए कि हम किसी की हानि,दुख और पीड़ा का कारण तो नहीं हैं? मेरे या हमारे चलते कोई दुखी,त्रस्त या परेशान तो नहीं है? तुलसी दास जी ने लिखा है–

परहित सरिस धर्म नहीं भाई। परपीड़ा सम नहीं अधमाई।।

रिश्तों में गतिशीलता, जीवन्तता, सहयोग, सहकार होना चाहिए। हर किसी के चरित्र का महत्वपूर्ण पक्ष होता है कि उसका स्वभाव या प्रकृति कैसी है? हम कर्मठ हैं, सक्रिय हैं,सहनशील हैं और स्वाभिमान के साथ जीना चाहते हैं तो हमें रिश्तों को सहेजने, सम्हालने और अपना दायित्व निभाने सीखना–समझना होगा। हमें भागना नहीं है परन्तु रिश्तों में अनावश्यक उलझना भी नहीं है। सांसारिक दृष्टि से देखने पर रिश्ते उलझाते से लगते हैं परन्तु आध्यात्मिक दृष्टि से यही रिश्ते हमें उच्चतर स्थिति की ओर ले जाने में सहायक हो सकते हैं। अध्यात्म का चिन्तन है, त्यागपूर्वक उपभोग या निर्लिप्त होकर सहयोग या मान–अपमान की चिन्ता किए बिना लगे रहना। अभ्यास किया जाय तो यह सब होता है, हो सकता है। एक और बात संत–महात्मा कहते हैं,'द्रष्टा बनो।'

जीवन में व्यावहारिकता आ जाये, हम रिश्तों का मनोविज्ञान समझ जायें,तो हमारे रिश्तों की सारी समस्यायें सुलझ जाती हैं। पति–पत्नी को सामंजस्य बनाकर जीवन भर एक–दूसरे के लिए, एक–दूसरे के साथ संकल्पित होकर जीना चाहिए। बच्चे जब तक स्वावलम्बी न हो जायें, उन्हें सहयोग करना चाहिए। आपसी रिश्तों में खुलकर विचार–विमर्श करना चाहिए और जितना सम्भव हो एक–दूसरे के लिए खड़ा रहना चाहिए। यह सम्बन्ध उभय पक्षी होना चाहिए। ताली दोनों हाथों से बजती है। किसी को ठगने या लाभ लेने की भावना से रिश्ते नहीं चलते।

अक्सर देखा जाता है,घर में चार भाई–बहन हैं,दो सम्पन्न हो गये हैं और दो कमजोर रह गये। ईश्वर सबके कर्म,विचार और संघर्ष के अनुसार फल देता है। सबको आत्म–चिन्तन,आत्म–निरीक्षण करना चाहिए। कमजोर बहाने बनाना शुरु करता है,दैनिक जीवन में अपना पुरुषार्थ जगाने के बजाय, अधिकांश समय दूसरों के दोष–दर्शन में बीताने लगता है। ईर्ष्या, द्वेष, अहंकार का शिकार होकर कटु वचन बोलने लगता है। हमेशा याद रखिए, हम जहाँ हैं, जिस परिस्थिति में हैं,इसके जिम्मेदार केवल हम हैं। हमारी दुर्दशा के लिए दूसरा जिम्मेदार नहीं है। यदि आपमें, कुछ भी बचा हुआ है, तो बिना देर किए संकल्प कीजिए और भीतरी दुर्गुणों को निकाल फेंकिए। स्वयं को बदलकर ही हम अपने को बचा सकते हैं।

रिश्तों के पीछे माया का संसार है वरना हमारे सारे सम्बन्ध लेन–देन के हैं। हमारे साथ दुनिया जो भी कर रही है,वही हमने अपने कर्म से, व्यवहार से, इस जन्म में या किसी पूर्वजन्म में उन सबके साथ किया है। हमारे साथ लोग अच्छा भी करते हैं, वह इसलिए कि हमने किसी जन्म में उनके साथ अच्छा किया है। ऐसे में हमें धैर्य के साथ,सहनशक्ति बढ़ाकर अपना पुरुषार्थ जगाना चाहिए, वाणी–व्यवहार पर कड़ाई से नियन्त्रण रखना चाहिए, तभी ईश्वर की कृपा भी होती है।

दृश्य - श्रव्य माध्यमों के प्रभाव

सौ. भावना दामले
स्वतंत्र लेखन
इन्दौर (मध्य प्रदेश)

वर्तमान युग में टेलीविजन तथा अन्य दृश्य–श्रव्य माध्यम आज के आधुनिक युग की आवश्यकता बन चुके हैं। यह समाज रूपी शरीर के लिए ऑक्सीजन के समान है, इस बात से सभी भली–भांति परिचित है। मगर, किसी बात की अति दुखदाई ही होती है। एक प्रसिद्ध उक्ति है – जो चाहते हो, उसे पाने की कोशिश करो, नहीं तो जो पाओगे उसे ही चाहने लगोगे।

आज हमारी हालत कुछ ऐसी ही हो रही है। इन माध्यमों के द्वारा हमें जो परोसा जा रहा है उसे ही हम पसंद करने लगे हैं। इन माध्यमों के द्वारा बहुत ही चमक–दमक तथा संपन्नतापूर्ण जिंदगी बताई जाती है। देख कर ऐसा लगता है कि यह सुविधापूर्ण जिंदगी थोड़े–से प्रयास से ही मिल जाती है। ऐसा युवाओं को लगता है जबकि यह सच नहीं है। परिश्रम करने से ही सफलता मिलती है। माता–पिता जब उनकी इच्छाओं की पूर्ति नहीं कर पाते हैं, वे माता–पिता से झगड़ा करते हैं तथा संवेदनहीन बनते जाते हैं तो वे उन्हें दुश्मन समझने लगते हैं।

इन माध्यमों की आभासी दुनिया झूठे सपने दिखाती है तथा इन सपनों को पूरा करने के लिए उकसाती है। युवा वर्ग इसके लिए नैतिक तथा और नैतिक किसी भी तरह के तरीके अपनाता है। इन माध्यमों द्वारा बताया जाता है कि अपने बच्चों को पढ़ने के लिए विदेश भेजना मतलब बहुत बड़ा काम कर लेना। आजकल विदेश भेजना मतलब बहुत महत्वपूर्ण लक्ष्य पा लेना है। बचपन से ही बच्चे के मन में यह भर देते हैं कि तुम्हें विदेश जाकर पढ़ना है और वहां पर अच्छी नौकरी करना है। वहां जाकर युवा वर्ग वहां के रंग में रंग जाते हैं और माता–पिता से कम संपर्क रखते हैं। घर पर आना जाना भी कम कर देते हैं तो फिर उन्हें संवेदनहीन कहा जाता है। तुम्हें हमारी जरा भी फिक्र नहीं है, तुम तो हमें भूल गए हो, ऐसे उलाहने दिए जाते हैं, इन माध्यमों का सबसे ज्यादा प्रभाव बच्चों पर पड़ता है, उनका कोमल मन अच्छे–बुरे का विचार किए बिना इसे ग्रहण करता है। जैसे जन्म दिवस या अन्य समारोह बड़ी ही धूमधाम से मनाना चाहिए, चाहे जितना भी खर्चा हो या खर्च करने की अभिभावकों की क्षमता ही ना हो। यदि अभिभावक उनके मन की ना करें तो बच्चे उनको अपशब्द कहने से भी नहीं डरते।

संवेदनहीनता से बचाने के लिए सभी को मिलकर सामूहिक प्रयास करने होंगे। हमें साधन और साध्य का भेद समझना और समझाना होगा। यह दृश्य–श्रव्य माध्यम हमारी प्रगति के लिए साधन है, साध्य है समाज का सामूहिक विकास। हमें खुद सोचना होगा कि क्या ग्रहण करें और क्या छोड़ दें। संवेदनशील समाज के लिए यह जरूरी भी है। जहां संवेदना होगी, वहां स्वस्थ समाज का विकास होगा।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

सशक्त बनकर, विश्व मंच पर उपस्थित हो रहा है भारत

राजकुमार जैन राजन
चित्रा प्रकाशन
आकोला, चित्तौड़गढ़
(राजस्थान)

जीवन चक्र की दौड़ में एक साल और अंधेरे की गर्त में खोने लगा और एक नए साल की सुबह का सूरज उदित हो चुका है। जब भी नया साल आता है, हम पुराने साल की समीक्षा करने लगते हैं और बीते वर्ष की गलतियों को न दोहराने के संकल्प भी लेते हैं। यह बदलाव उत्साह लाता है, रुककर सोचने को विवश करता है। यह प्रक्रिया निरन्तर चलती है, क्योंकि हम पुराने से प्रायः सबक नहीं लेते। ऐसा अगर होता तो आतंकवाद अपना काला साया यूं ही न फैलाता। बेकसूर बालिकाओं का मानमर्दन कर उनकी हत्या नहीं की जाती न उन्हें जिंदा जलना पड़ता। यह पूरा साल अपराध के भयानक कुहासों में डूबा रहा। नैतिकता का भयंकर दुर्भिक्ष छाया हुआ है। बाजार में पूरी कीमत चुकाने पर भी ग्राहक को शुद्ध पदार्थ की प्राप्ति नहीं होती। विध्यार्थियों में अनुशासनहीनता व्याप्त है। वे तोड़–फोड़ व हिंसात्मक प्रवृतियों में जुटते तनिक भी नहीं हिचकिचाते। बीते साल के खाते में क्या कुछ नहीं आया। सन्न कर देने वाली साजिशें, दंग कर देने वाले भंडाफोड़, नींद उड़ा देने वाले षड्यंत्र और रोम रोम में खौफ भर देने वाली हत्याएं, लूट बलात्कार! विकास की गतिविधियां एकाएक थम गई। इधर पडौसी देश भारत की अस्मिता को ललकारते कुटिल चालों द्वारा हमारी व्यववस्थाओं को प्रभावित करने में लगे रहे। स्वार्थी मानव इस बात को भूलता जा रहा है कि और कुछ होने से पहले वह एक मानव है। राष्ट्र उसके लिए सर्वस्व है।

इन सब विडंबनाओं के बाद भी भारत जैसे विशाल देश ने जिस संयम, अनुशासन और जीवट का परिचय दिया देश और विदेशों ने भारतीय नैतृत्व पर अपना विश्वास व्यक्त किया। जी–20 की अध्यक्षता हो या विश्वमंचों पर सशक्त भागीदारी हो, कई महत्वपूर्ण उपलब्धियां भी हमारे देश ने प्राप्त की। हम सशक्त बनकर विश्व मंच पर अपनी उपस्थिति दर्ज करवाने में सफल रहे हैं। नव वर्ष के साथ इसमें और मजबूती आएगी। हमारी चर्चा विगत की भूलों, कमियों के बारे में चिंतन करना है। कहते हैं, इंसान जिन दिनों गुफाओं में रहता था, तो जंगली जानवरों से बचने के लिए आग जलाकर रखता था। धीरे धीरे बांस, पत्थर और लोहे के हथियार बनाये। कबीलों में रहने लगा तो कबीलों की रक्षा के लिए युवा लड़कों के दल बन गए। तीर, भाले, कटार, कुल्हाड़ी जैसे हथियार वजूद में आ गए। जाहिर है आदमी से ज्यादा बुद्धिमान प्राणी इस धरती पर नहीं है। लेकिन समस्या तब पैदा होती है जब आदमी को आदमी से खतरा पैदा होता है। जब आदमी का फैलाया आतंक आदमी को ही सताने लगता

है। जब सुरक्षा के लिए बनाए गए उसी के हथियार उसी पर साधे जाने लगते हैं।

यूं तो हमारी संस्कृति, सामाजिक मर्यादाएं, मूल्य व आदर्शों का एक बड़ा हिस्सा वक्त की धारा में बह गया है लेकिन सबसे अधिक प्रभावित रहा महिला वर्ग। लड़कियों के पैदा होने से लेकर भ्रूण हत्या तक, बहू विवाह से दहेज प्रथा तक, घरेलू हिंसा से लेकर महिला आरक्षण तक, केरियर और घर के बीच स्थिति तक उनकी चर्चा रही। यह बात अलग है कि महिलाओं को कुरीतियों से मुक्त करवाने, उन्हें स्वंत्रता दिलवाने में पुरुषों का योगदान रहा लेकिन उसका सबसे ज्यादा शोषण भी पुरुषों द्वारा ही हुआ। शायद यही कारण है कि नारी जागरूकता बार बार द्वार पर दस्तक देती है फिर भी महिलाओं के प्रति हिंसा, बलात्कार, भेदभाव और शोषण में कोई कमी नहीं हुई है।बावजूद इसके कुछ महिलाओं ने आने वाली पीढ़ी के लिए नई राहें जरूर बनाई है, जो प्रशंसनीय हैं। आनेवाला साल भी शायद इन त्रासदियों से प्रभावित रहेगा। आजकल जो हो रहा है उसने सोचने पर मजबूर कर दिया है कि आखिर हम किधर जा रहे हैं और कैसे समाज की तस्वीर पेश कर रहे है? इंसान से ज्यादा धन महत्वपूर्ण हो गया है। नैतिकता की भावना हमारे स्वार्थो के नीचे कहीं दब गई है। कोरोना महामारी से विश्व अब उबरने लगा है फिर भी एक आशंका हमेशा बनी रहती है कि पूरी दुनिया की तस्वीर कैसी होगी, अभी यह कहना बहुत कठिन हैं। नए वर्ष में हम सबको इन सब चीजों से ऊपर उठकर सोचना होगा। हमें नए सिरे से सब कुछ गढ़ना है, तोड़ना नहीं है, टूटे हुए को जोड़ना है। मानव जीवन का संरक्षण और सुरक्षा, नए साल का यही सूत्र मंत्र होना चाहिए क्योंकि विनाश तो हम बहुत देख चुके हैं अब तो संवेदना को सर्वोपरि स्थान देना होगा ताकि आने वाली पीढ़ी बड़ों से ये न पूछे कि आतंक का अर्थ क्या होता है? लूट, हत्या, बलात्कार क्यों होते हैं?

सौभाग्य से हमारे देश को वर्तमान में एक सशक्त नैतृत्व प्राप्त हुआ है जो मानव और मानवता के निर्माण में युद्धस्तर पर लगा हुआ है। जिसके मन में राष्ट्र के पुनर्निमाण एवं पुनः प्रतिष्ठा का पवित्र संकल्प हैं। युग बदल रहा है, साथ ही जीवन–निर्माण, जीवन–मूल्यांकन के आधार भी बदल रहे हैं। भारतवर्ष व्यवहारिक नैतिकता की दृष्टि से आज अन्यान्य राष्ट्रों की तुलना में बहुत आगे हैं। वह विश्व गुरु बनने की ओर पुनः अग्रसर है। 'राष्ट्र सुरक्षित तो हम सब सुरक्षित' की पवित्र भावना के साथ हम सब जीवन मे आगे बढ़ने का संकल्प लेते हुए खुशियों के साथ नववर्ष का स्वागत करें।

जो आज नया है वह कल के लिए पुराना हो जाएगा। वर्तमान में सुदृढ भविष्य की नींव डालनी है। इसमें पुरातन का अनुभव सहयोगी बनता है। मनुष्य जीवन एक काव्य है, जो नूतन चिंतन, नवीन दृष्टि देता है। जिसे जागना है वह जागेगा और जिसे सोना है वह सोएगा ही, यह नियति है। सूरज नया सवेरा लेकर ही उदित होता है। नई उम्मीदों, सपनों को नए संकल्पों से बदलने का लक्ष्य और बीती गलतियों को सुधारने का निश्चय ही नव वर्ष का उपहार बन सकता। उत्साह है तो जिंदगी है।

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र

क्या आपकी लेखन में अभिरुचि है?
क्या आप भी कभी अपने विचारों, भावनाओं को व्यक्त करने के लिए कागज– कलम उठाते हैं?
क्या आप लेखक/लेखिका, कवि/कवियत्री है?

आपको **अध्यात्म संदेश** ई पत्रिका की ओर से आमंत्रण है, आप अपनी रचनाएं, कविताएं, गीत, लघु कथाएं हमें प्रेषित करें। आपकी रचनाएं आलेख प्रकाशन योग्य होने पर उसका पत्रिका में अवश्य प्रकाशन किया जाएगा।

अपनी रचनायें हमें प्रेषित करते समय यह अवश्य सुनिश्चित करें कि यह रचना आपकी अपनी मौलिक कृति है और न तो यह किसी पत्र – पत्रिका – पुस्तक – ब्लॉग – वेबसाइट आदि में प्रकाशनार्थ विचाराधीन है और न ही कभी प्रकाशित हुई है।

आपकी रचना को मूल रूप में प्रकाशित/संपादित रूप में प्रकाशित करने अथवा प्रकाशित न करने का पूर्ण विवेकाधिकार संपादक मंडल का है।

आलेख भेजने की अंतिम तिथि 15 जनवरी 2023

विशेष : शब्द सीमा 500–750 शब्दों के मध्य होनी चाहिए

1. लेखक/लेखिका अपनी रचना यूनिकोड/कृतिदेव – वर्ड फाइल में टाइप कराकर ही भेंजे। पी. डी. एफ फाइल न भेजें।
2. लेखक/लेखिका अपनी स्वरचित अप्रकाशित एवं मौलिक रचना के साथ कृपया अपना संक्षिप्त परिचय, व्हाट्सप नंबर, फोटो के साथ भेजें ।
3. आपकी स्वीकृत रचना आपके फोटो के साथ प्रकाशित की जायेगी। प्रकाशित रचना पर पारिश्रमिक देय नहीं है।
4. जनकल्याण हित में ज्ञान वर्धन हेतु यह पूर्णतः निः शुल्क है। रचनाएँ ई–मेलः **editor.adhyatmsandesh@gmail.com** पर प्रेषित करें।

– योगी शिवनन्दन नाथ
प्रधान संपादक

मासिक
अध्यात्म संदेश
जनकल्याण एवं राष्ट्रोत्थान को समर्पित धर्म, संस्कृति, अध्यात्म चिंतन का मासिक ई–पत्र
editor.adhyatmsandesh@gmail.com
m.facebook.com/अध्यात्म संदेश
गोरक्ष शक्तिधाम सेवार्थ फ़ाउण्डेशन
www.gssfoundation.org

मूल्याधारित पत्रकारिता की निष्पक्षता राजयोग के मर्म की सुखद परिणिति

डॉ. बी. के. मेधावी शुक्ला
(पूर्व अनुसंधान अध्येता)
गांधी एवं शांति अध्ययन विभाग
महात्मा गांधी अंतरराष्ट्रीय हिंदी विश्वविद्यालय, वर्धा

"मानव जीवन में मूल्यों का सृजन एक अलौकिक घटना की परिणिति है जो व्यक्ति को मानवीय संवेदनशीलता के विभिन्न पक्षों से जोड़ने का प्रयास करती है जिससे व्यक्तिगत जीवन की उपादेयता जीवन की सार्थकता में परिवर्तित हो जाती है। जीवन में आध्यात्मिक सम्प्रेषण की आवश्यकता उत्पन्न होने का अर्थ है कि व्यक्ति स्वयं के संबंध में एक जिज्ञासु प्रवृत्ति के रूप में रहकर स्वयं का ही अवलोकन करना चाहता है तथा इस निरन्तरता के लिए वह मीडिया मीमांसा के गूढ़ रहस्यों की ओर बढ़ते हुए पठन – पाठन , मनन – चिंतन तथा स्वाध्याय से जुड़ कर सत्य , प्रेम एवं अहिंसा के मार्ग पर चलकर राजयोग और मौन के प्रति आस्था व्यक्त करता है । यह शोध आलेख इस सत्य को भी प्रकट करता है कि मूल्याधारित जीवन की व्याख्या में सहज राजयोग की उपस्थिति व्यक्ति को आत्म अभिव्यक्ति हेतु जिस मस्तिष्क एवं हृदय को माध्यम बनाती है वह संचार का प्रथम व्यक्त स्वरुप होता है । मूल्य आधारित जीवन सर्व प्रथम स्वयं से संलाप करता है तथा व्यक्ति को यह बताता है कि उसके लिए जीवन की प्रक्रिया और उसकी गतिशीलता किन व्यवस्थाओं से होकर गुजरती है तथा उसे क्या करना चाहिए एवं क्या नहीं करना चाहिए के बोध से परिचित भी कराती है । सामाजिक जीवन में जब मूल्य आधारित पत्रकारिता और सहज राजयोग के संबंधों को प्रकट करने का प्रयास किया जाता है तब एक सही परिणाम तक पहुंचना मूल्यपरक जीवन में कठिन प्रतीत होने लगता है । जीवन की स्वार्थपरता ' मैं ' और ' मेरे ' के भेद को इस प्रकार से रेखांकित करती है कि मेरा जीवन और मेरा व्यवसाय, मेरे जीवन के दो अलग अस्तित्व हैं इस सत्य की बार – बार पुष्टि होने के कारण मूल्याधारित जीवन एवं मूल्याधारित पत्रकारिता के मध्य एक द्वन्द खड़ा हो जाता है और व्यक्ति सहज राजयोग को एक अलग तरीके से देखने का प्रयास करने लगता है और वह किसी वास्तविक परिणाम तक नहीं पहुँच पाता है । अहिंसक जीवन शैली के परिप्रेक्ष्य में जब मूल्य आधारित पत्रकारिता को आंकने का प्रयास किया जाता है तो सहज राजयोग की प्रासंगिकता अपनी सम्पूर्ण अवस्था को प्रतिपादित करती है जिसके प्रतिफल व्यक्तिगत जीवन में किसी मनुष्य की ऊँचाई और मूल्यों से सृजित जीवन, समर्पित अवस्था को प्राप्त करते हुए नैतिक मूल्यों को स्थापित करने में सफल हो जाता है। मूल्याधारित पत्रकारिता

और सहज राजयोग के अंतर्गत अंतरसंबंधों को विश्लेषित करने से यह ज्ञात हो जाता है कि व्यक्ति को स्वयं का जीवन उच्च मूल्यों के साथ गतिशील रखना होगा तथा जीवन की व्यावहारिकता को अपने पेशेवर कार्य कुशलता के साथ सार्वजानिक जीवन की अनिवार्यता एवं उपयोगिता को गति प्रदान करते हुए मूल्यपरक जीवन के साथ न्याय करना होगा ताकि व्यक्तिगत जीवन और सार्वजनिक जीवन की शुचिता को बनाए रखा जा सके।"

जीवन मूल्य, पत्रकारिता एवं राजयोग का सामंजस्य : जनसंचार के मध्य कार्य करते हुए स्वयं को आध्यात्मिक सम्प्रेषण का संवाहक बनाने की आंतरिक अभिलाषा जीवन मूल्य को संरक्षित करने के प्रति निष्ठावान रहती है और राजयोग से अंततः सदगति के तमाम प्रयासों को सफल बनाने के निरंतर प्रयास को किसी भी स्थिति में पूर्णता प्रदान करना चाहती है । किसी भी मनुष्य के लिए निजी जीवन और सार्वजानिक जीवन के मध्य श्रेष्ठ सामंजस्य बनाने के लिए राजयोग का बड़ा योगदान होता है क्योंकि राजयोग स्वयं के उत्थान के सम्पूर्ण आयाम व्यक्ति को अनुभव कराता है जिससे एक मनुष्य को उसकी आत्मिक शक्तियों एवं गुणों का ज्ञान सहजता से हो जाता है। व्यक्तिगत जीवन में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का उपयोग भले ही व्यावहारिक दृष्टि से वाचा के द्व ारा प्रतिपादित होता है लेकिन राजयोग का सामंजस्य जीवन की अभिव्यक्ति को मंसा, वाचा, कर्मणा के साथ जोड़कर देखने का प्रयास करता है और आत्मिक दृष्टि से समय, संकल्प, संबंध एवं स्वप्न की पवित्रता व्यक्ति को जीवन मूल्य के संबंध में उस उंचाई पर स्थापित कर देती है कि जो कुछ सृजन किया जा रहा है वह मानव कल्याण के परिप्रेक्ष्य में स्वमेव स्वर्ण अक्षरों में अंकित होता जाएगा। मूल्याधारित पत्रकारिता के समक्ष उस समय संकट उत्पन्न होता है जब आध्यात्मिक सम्प्रेषण और मीडिया मीमांसा के गूढ़ार्थ उस सत्य को प्रतिपादित करना चाहते हैं लेकिन सत्य पर पड़े हुए आवरण को उठाने का साहस एवं आवरण हटाने का दुस्साहस वे नहीं कर पाते है।

सम्प्रेषण आधारित जीवन की गतिशीलता जब मिशन पत्रकारिता के आयाम से गुजरती है तो वह इतनी शक्तिशाली होती है कि उसे भय एवं प्रेम के संबंधों को अनुशीलन करने में देर नहीं लगती है। एक व्यक्ति किसी भी स्थित्ति में ' अहिंसक जीवन शैली ' अपनाकर ही रहेगा यह केवल मूल्य आधारित जीवन का स्वरुप नहीं बल्कि सामाजिक दबाव से उपजी वह स्थित्ति है जहाँ मूल्य आधारित पत्रकारिता का सामाजिक दबाव , व्यक्ति को ' श्रेष्ठ जीवन शैली ' अपनाने के लिए बाध्य कर देता है। सामाजिक संतुलन की स्थापना का दायित्व बोध – जब ' मूल्य आधारित पत्रकारिता का मिशन ' बन जाता है तब सहज राजयोग का परिणाम व्यक्तिगत जीवन मूल्य के माध्यम से समाज में प्रकट होने लगता है और पत्रकारिता अपने स्वाभाविक गुणों के साथ कार्य करने लगती है तथा राजयोग का सामंजस्य व्यक्ति को बार – बार आत्मिक दृष्टिकोंण को विकसित करने और जीवन मूल्यों के साथ जीवन पर्यत डटे रहने की स्थितियों को आत्म सात कर लेते हैं।

श्रेष्ठ जीवन के संज्ञान से उपजी व्यावहारिकता : मानव जीवन शैली के प्रति मीडिया का सकारात्मक नजरिया जीवन प्रणाली को जब अहिंसक जीवन शैली के रूप में देखने का प्रयास करता है तब वह कहीं न कहीं भविष्य के गर्भ में छिपे और कभी न कभी उथल – पुथल के द्वारा मानवता को तहस – नहस करने की ओर ईशारा करते हुए बस इस बात का संज्ञान लेने की कोशिश करते हैं कि कहीं – 'आधुनिक जीवन और पाश्चात्य जीवन शैली 'का दबाव मनुष्य पर इतना ना पड़ जाए कि 'मर्यादित जीवन शैली' के लिए कोई स्थान शेष ही ना बचे ।

आध्यात्मिक सम्प्रेषण के द्वारा : 'श्रेष्ठ जीवन शैली ' के जितने भी आयाम प्रस्तुत्त किए गए उसमें मीडिया मीमांसा का दखल इतना पैना था कि मनुष्य जीवन की व्यावहारिकता समाज के सम्मुख धर्म – कर्म के परिष्कार के रूप में अभिमुखित हो सकी और उसने आध्यात्मिक जगत में पुरुषार्थ को मानवता के लिए उपयोगी बताया तथा इस बात के प्रमाण प्रस्तुत्त कर दिए कि – 'सहज राजयोग की परिणिति 'आत्मा को गहरे मौन की ओर ले जाती है जहाँ से आत्मानुभूति का स्वरुप विकसित होता है । अब प्रश्न उठता है कि मूल्याधारित पत्रकारिता मानव जीवन के लिए क्या कुछ संप्रेषित कर दे कि सहज राजयोग की परिणिति पूर्णरूपेण मुखरित हो जाए क्योंकि 'श्रेष्ठ जीवन का संज्ञान' लेने से जिस व्यावहारिकता के प्रकट होने की सम्भावना रहती है उसमें परमात्म शक्तियों का भण्डार सर्व प्रथम आत्मिक मर्यादा को समुन्नत बनाता है जिससे व्यक्ति श्रेष्ठ जीवन की ओर गतिशील हो सके । वर्तमान आपाधापी के युग में मानव जीवन के प्रति संवेदनशील दृष्टिकोंण अपनाने की मानसिकता व्यक्ति को मूल्याधारित पत्रकारिता के लिए अभिप्रेरित करती है जिसमें श्रेष्ठ जीवन का संज्ञान अति महत्वपूर्ण पक्ष होता है। आध्यात्मिक सम्प्रेषण का परिदृश्य मानवता के प्रति इतना अधिक संवेदनशील होता है कि वह मनुष्य द्वारा व्यावहारिक जीवन में किए जाने वाले धर्म से जुड़े कर्तव्य को श्रेष्ठ कर्म द्वारा अंगीकार करने का प्रयास करता है क्योंकि मीडिया सामाजिक मनोविज्ञान की एकांगी प्रस्तुत्ति को स्वीकार नहीं करता , उसे ऐसा लगता है कि जो कुछ वह अहिंसक जीवन शैली के स्वरुप से उसकी परम्परा को विकसित करने के लिए क्या भूत, वर्त्तमान एवं भविष्य के मध्य इतनी श्रेष्ठ तन्मयता से अपनी भूमिका निभा सकेगा? श्रेष्ठ जीवन के उजले पक्ष मानवता को जीवन की व्यावहारिकता से सदैव जोड़ने का प्रयास करते हैं जिसके परिणाम स्वरुप जीवन मूल्यों का संधारण नैसर्गिक रूप से होता है और जनसंचार के विभिन्न माध्यम स्वयं के भीतर नैतिक मूल्यों को विकसित करते हुए अपनी कर्म कहानी को आगे बढ़ाते हैं जिससे स्व – उन्नति के साथ समाज को अपने मूल्यांकन का आधारभूत बोध मूल्यानुगत पत्रकारिता के द्वारा कराया जा सके ।

राजयोग के प्रयोग से सृजनात्मक पत्रकारिता का अभ्युदय: मूल्याधारित पत्रकारिता के संबंध में जितने भी प्रयोग किए गए उसके अंतर्गत जिन मूल्यों का समावेश किया गया उनमें जीवन की शिक्षा, अनुभव, सक्षमता, कल्पना शक्ति, सृजनात्मकता, नवाचार एवं ईमानदारी प्रमुख रूप से सम्मिलित है। संचार माध्यम के द्वारा जब सहज राजयोग को संप्रेषित किया जाता है तो इस बात का ध्यान रखा जाता है कि आत्मा के गुण एवं शक्तियों के माध्यम से सृजनात्मकता का अभ्युदय सुनिश्चित हो सके जो एक मनुष्य को पुण्यात्मा के आभामंडल से परिचित कराता है जिससे व्यक्ति अपने आध्यात्मिक पुरुषार्थ के द्वारा स्वयं को देवात्मा के स्वरूप में परिणित कर पाता है। राजयोग के प्रयोग से सृजनात्मक पत्रकारिता के जिस आयाम का अभ्युदय होता है उसमें – ' आत्म अनुभूति और परमात्म अनुभूति ' का सबल पक्ष सैदव कार्यरत रहता है जो पत्रकारिता के साधकों को – ' साधन की पवित्रता के साथ साध्य की पवित्रता ' से पवित्र संबंध बनाने के लिए अभिप्रेरित किया करता है ।

सामाजिक परिवेश के अंतर्गत सम्प्रेषण आधारित व्यवस्था में जीवन मूल्य संरक्षित बने रहें और मानवता सुरक्षित हो इसका विशेष ध्यान रखा जाता है और मीडिया का किसी भी स्थित्ति में नैतिक मूल्यों के साथ सरोकार बनाकर इसके लिए सहज राजयोग की उपयोगिता को वृहद् दृष्टिकोंण के तहत स्वीकार किया जाना चाहिए जिससे सृजनात्मक पत्रकारिता के मार्ग को प्रशस्त किया जा सके । आधुनिकता के दौर में सृजनात्मक पत्रकारिता द्वारा जब राजयोग के प्रयोग की बात की जाती है तब आध्यात्मिक सम्प्रेषण अपनी गहरी पैठ सामाजिक विडम्बनाओं को उकेरने में अपनाता है क्योंकि नकारात्मक सूचनाओं का तेजी से बढ़ता स्वरूप अधिकतम स्थान पर स्वयं की उपस्थिति को इस प्रकार से दर्ज करता है कि सकारात्मक समाचार के मध्य – " वह नकारात्मक समाचार जो आपके लिए जानना जरुरी है " जैसे जुमलों के साथ नकारात्मकता अपनी पैठ सकारात्मक पृष्ठ पर जमाती है जबकि शेष अखबार के पन्नों पर नकारात्मक सूचनाओं का जमावड़ा पहले से ही विद्यमान है । कई बार 'आध्यात्मिक सम्प्रेषण और मीडिया मीमांसा ' के मध्य इतना द्वन्द बढ़ जाता है कि मूल्याधारित पत्रकारिता को अपनी उपस्थिति दर्ज करने में एक दीर्घकालीन शीत युद्ध की वीभत्स स्थितियों से गुजरना पड़ता है और सृजनात्मक पत्रकारिता की बानगी, सकारात्मक मनोदशा के मध्य राजयोग के प्रयोग की बानगी प्रस्तुत्त करने हेतु भविष्य में स्थान तलाशती रहती है।

उपसंहार (निष्कर्ष): मूल्याधारित पत्रकारिता और सहज राजयोग का गहन संबंध होता है जो सामाजिक व्यवस्थाओं के मध्य आध्यात्मिक सम्प्रेषण को इसलिए महत्व प्रदान करता है क्योंकि पत्रकारिता के निहितार्थ निष्पक्षता की ओर बढ़ने के लिए राजयोग के प्रयोग को हर स्थित्ति में क्रियान्वित करना चाहते हैं जिससे सृजनात्मक पत्रकारिता का अभ्युदय विरोधाभासी स्थितियों में भी सुनिश्चित हो सके। मूल्याधारित पत्रकारिता को संबल प्रदान करने में आध्यात्मिक सम्प्रेषण के विभिन्न आयाम जहाँ प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से मदद करते हैं वही जीवन मूल्य को अक्षुण्य रखने में राजयोग का श्रेष्ठ सामंजस्य सार्थक भूमिका भी निभाता है। जब हम श्रेष्ठ जीवन के परिपक्व स्वरुप का सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक सन्दर्भो में संज्ञान प्राप्त करने की कोशिश करते हैं तब हमें जीवन की व्यावहारिकता का स्पष्ट रूप से ज्ञान हो पाता है। राजयोग के प्रयोग से सृजनात्मक पत्रकारिता का जन्म मूल्याधारित पत्रकारिता को बनाए रखने में व्यावहारिक रूप से सहायक होता है और यह वास्तविकता ही सहज राजयोग के परिणामों को कल्याण ाकारी स्वरूपों में प्रस्तुत्त कर देती है। अतः मूल्याधारित पत्रकारिता ने सामाजिक विकास के विभिन्न आयाम को नयी दिशा देने में अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है और जीवन मूल्यों से जुड़े हुए मंगलकारी स्वरुप को सामाजिक उत्थान के लिए स्वभावगत जीवन मूल्यों से सिंचित करने का सदैव प्रयास किया है जो राजयोग के सामंजस्य को जीवन की शुचिता के साथ रेखांकित करते हुए स्वयं को गौरवान्वित करता है।

दागदार होता गुरू-शिष्य का रिश्ता

मधुबाला शांडिल्य
शिक्षिका, लेखिका
झारखंड

गुरु और शिष्य का रिश्ता भारतीय संस्कृति के अनुसार बड़ा ही पाक और पूजनीय है। लेकिन आज के कलयुग में ये रिश्ता भी दागदार होता नजर आ रहा है। महज चंद लोगों की वजह से भले ही ये रिश्ता आज भी पूजनीय हो लेकिन अधिकांशतः जगहों पर ये रिश्ते अब दागदार होते नजर आ रहे हैं। आज के शिक्षक अपनी गरिमा को भुलाकर अपने शिष्य के साथ प्रेम प्रसंग में रहना बड़ा पसंद करते हैं। कई शिक्षक और शिक्षिका शादी शुदा होने के बावजूद भी अपने शिष्यों के साथ रोमांस कर टाइम पास करने में गौरवान्वित महसूस करते हैं जो कि बड़े ही शर्म की बात है।

कई दफा बच्ची को घर में अकेला देखकर शिक्षक के द्वारा बच्ची के साथ अभद्रतापूर्ण व्यवहार बहुत ही निंदनीय है। कोचिंग संस्थानों में अक्सर महिला शिक्षिका के उपर अपने ही विद्यार्थियों के द्वारा टीका टिप्पणी करना कोई बड़ी बात नहीं है। ऑन लाइन शिक्षिका को शादी के लिए प्रपोज कर उसे असहज महसूस कराना गुरु और शिष्य के रिश्ते के साथ खिलवाड़ है।

भारत जैसे देशों में आजकल हर टीवी चौनल और सोशल साइट्स पर गुरु शिष्य के रिश्ते को आश्कि में तब्दील कर ना जाने कितने ही गाने फिल्माए जा रहे हैं। जो कि गुरु और शिष्य के रिश्ते को शर्मशार कर देने वाली घटना है।

भारतीय संस्कृति के अनुसार गुरु और शिष्य का रिश्ता सदैव पूजनीय माना गया है और अंत तक रहेगा। लेकिन कुछ असमाजिक तत्वों की वजहों से पाश्चात्य संस्कृति को बढ़ावा दे कर गुरु और शिष्य के रिश्ते को अपने धर्म और कर्म के कर्त्तव्य पथ से पथभ्रष्ट करने की कोशिश की जा रही है। वक्त रहते इस पर लगाम कसने की आवश्यकता है। ये गुरूओं का देश है जहां गुरु भगवान से भी ज्यादा पूजनीय है। इसलिए गुरु और शिष्य का रिश्ता सदैव पुजनीय था, है और रहेगा।

'गुरु गोविंद दोनों खड़े काके लागूं पाय
बलिहारी गुरु आपने गोविंद दियो बताए'

याददाशत बढाने का करें उपचार/प्रयोग

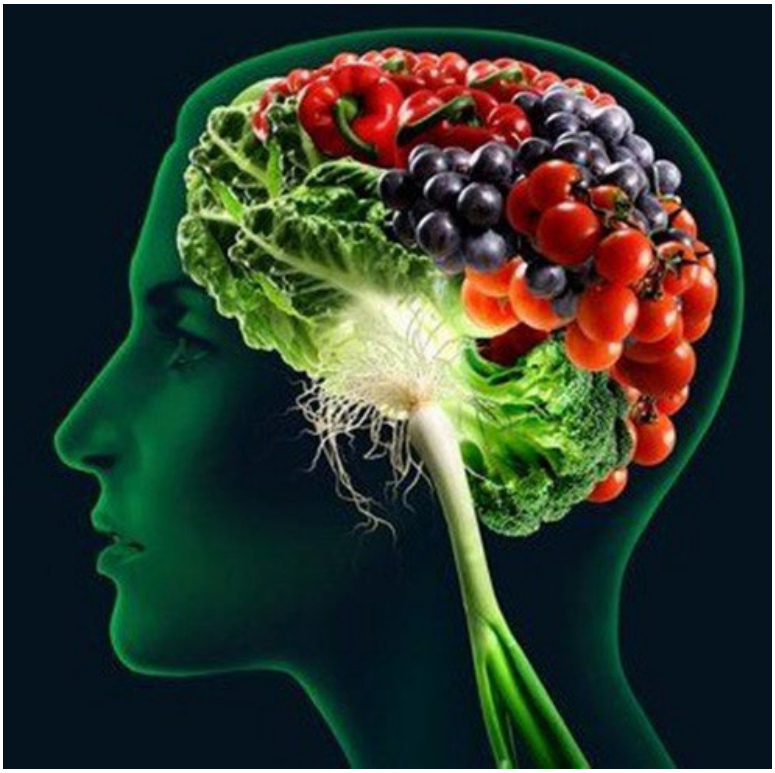

डॉ. अरविंद जैन (विद्यावाचस्पति)
संरक्षक शाकाहार परिषद्
भोपाल

आजकल मनुष्य शांत नहीं बैठना चाहता हैं, वह कार्य में व्यस्त रहेगा या फिर मोबाइल में लगा रहेगा, इससे मनुष्य की शक्ति का दुरूपयोग भी कह सकते हैं या फिर वह कोई न कोई अनवांछित क्रियायों में लगा रहता हैं .ख़ाली दिमाग शैतान का घर होता हैं, इसका मतलब आप मस्तिष्क का अतियोग, मिथ्यायोग या हीनयोग करे। शक्ति के रूप तीन प्रकार से उपयोग कर सकते हैं, सकरात्मक, नकारात्मक या संचयात्मक वर्तमान में मानसिक तनाव, ईर्ष्या, चिंता, कुंठा, जलन, प्रतिस्पर्धा आदि के कारण हमारी ऊर्जा इन क्षेत्रों में अधिक खर्च होती हैं, जिससे हम बाहर निकलने में बहुत समय खर्च करते हैं।

याददाश्त कम होने की शिकायत सब करते हैं, लेकिन जब तक यह एक गंभीर बीमारी न बन जाए लोग इसके लिए कोई उपाय नहीं करते। याददाश्त को तेज करने के लिए इन बातों को पालन कर सकते हैं।

तकनीति से भरे इस समय में किसी चीज को याद रखने की जरूरत नहीं है। यही वजह है कि आज के समय में ज्यादातर लोगों को बातों को याद नहीं रहती। यहां तक की सबसे करीबी व्यक्ति का बर्थडे याद रखने के लिए भी लोग मोबाइल में रिमाइंडर या सोशल मीडिया के नोटिफिकेशन पर डिपेंड रहते हैं। आपकी यह भूलने की आदत अल्जाइमर, डिमेंशिया जैसे बीमारी का भी लक्षण हो सकती है। ऐसे में जरूरी है समय रहते अपनी याददाश्त को दुरुस्त करने के उपाय करें।

रोज लें 7 घंटे की नींद : नींद याददश्त को बूस्ट करने का काम करता है। दरअसल, जब आप रात में सोते हैं, तो न्यूरॉन्स (जिन्हें सिनैप्स कहा जाता है) के बीच का कनेक्शन उन यादों को हटाने का काम करते हैं, जिनकी आपको जरूरत नहीं होती है। रात के दौरान सिनैप्स की यह चुनिंदा छंटाई आपको अगले दिन नई यादें बनाने के लिए तैयार करती है। एक

वयस्क को कम से कम 7–8 घंटे की नींद की आवश्यकता होती है।

नियमित व्यायाम करें : याददाश्त में सुधार करने के लिए रोज शारीरिक गतिविधियों को करने की सलाह देती है। जब एक्सरसाइज या व्यायाम करते हैं, जो इससे पूरे बॉडी के साथ दिमाग में ब्लड का सर्कुलेशन बढ़ता है। जिससे सेल्स बेहतर तरह से अपना काम कर पाते हैं।

रोज कुछ नया सीखने की कोशिश करें : याददाश्त को मजबूत बनाने के लिए जरूरी है, आप अपने दिमाग को नए चीजों को सीखने में लगाएं। जब आप ऐसा करते हैं, तो ब्रेन में नए न्यूरॉन्स कनेक्शन बनते हैं। यह आपके मेमोरी को बूस्ट करने का काम करते हैं।

मल्टीटास्क न करें : हालांकि मल्टी टास्किंग करने वालों की डिमांड आज के समय में काफी बढ़ रही है। लेकिन वास्तव में आपकी यह आदत ब्रेन को डैमेज करने का काम करती है। जब आप दो कामों को एक साथ करते हैं, तो आपकी एकाग्रता बट जाती है। जिससे चीजों को याद रखने की क्षमता प्रभावित होती है।

पौष्टिक आहार लें : दिमाग को सही और प्रभावी ढंग से काम करने के लिए पर्याप्त मात्रा में पोषण की आवश्यकता होती है। नियमित रूप से पौष्टिक और संतुलित आहार लेना चाहिए। कुछ फूडआहार है, जो दिमाग के लिए बहुत फायदेमंद होते हैं। इसमें अखरोट, ब्रोकली, हल्दी, डार्क चॉकलेट आदि शामिल है।

इसके अलावा कुछ समय योग या ध्यान में लगाएं, आजकल पेन से लिखने का चलन लुप्त होता जा रहा हैं इसके लिए नित्य एक एक पेज हिंदी अंग्रेजी या अपनी मातृभाषा में जरूर लिखे, याददाश्त बढ़ाने के लिए कोई भी विषय को तीन बार लिखो या नौ बार पढ़ो, पर आजकल लिखने पढ़ने का चलन खतम होने से मष्तिष्क की क्रियशीलता कम होती जा रही हैं। पहले याद करने का चलन था, आजकल गणित जैसे विषय पढ़े जाते हैं, अभ्यास का काम खत्म .हमें पुनः पुरातन शैली को अपनाना होगा।

जय श्री महाकाल! ॐ अलख निरंजन को आदेश! जय श्री भैरवनाथ!

स्वः पूजयन्ति देवास्तं मृत्यलोके च मानवः। पाताले नागलोकाश्च श्रीगोरक्ष नमोऽस्तुते ।।

यदि ईश्वर में आस्था है?
तो कष्ट से मुक्ति का रास्ता है!

आस्था है? रास्ता है?

निःसंतान दंपति मिलें।

जन हित में निःस्वार्थ सेवा

सप्ताह में केवल दो दिन **मंगलवार एवं शनिवार** आने से पहले फोन पर समय लेना अनिवार्य है।

संपर्क: **योगी शिवनंदन नाथ** Ph. : 0731-4918681, M. : 7415410516 **हवा बंगला रोड़, इंदौर, मध्य प्रदेश**

महामानव बननें की सहज साधना

डॉ. साधना गुप्ता
(वर्ल्ड रिकॉर्ड होल्डर)
सहायक आचार्य
(राजकीय स्नातकोत्तर महाविद्यालय)
झालवाड़, राजस्थान

एक बात जो संसार के प्रत्येक व्यक्ति के लिए निर्विवाद रूप से कही जा सकती है वह है,– प्रसन्नता, सुख एवं शांति की अपेक्षा–आकांक्षा। हमारे संपूर्ण जीवन के कार्य कलाप की आधारशिला यही है। यही कारण है कि इस प्रयास में सफलता सौभाग्य और विफलता हतभाग्य के रूप में परिभाषित की जाती है। सरल शब्दों में कहें तो जीवन की प्रसन्नता को ही भाग्य और दुर्भाग्य का मापदंड समझा जाता है। इसी कारण उसे ईश्वर की देन मानकर व्यक्ति स्वीकार करता आया है। परंतु प्रसन्नता ईश्वर प्रदत्त भाग्य या दुर्भाग्य नहीं, स्वयं व्यक्ति के वश की बात है। आइए देखें,– कैसे ?

प्रसन्नता– प्रसन्नता को समझने के लिए स्वेट मॉर्डन का यह कथन पर्याप्त है,– 'प्रसन्नता तो' मनुष्य की परछाई की तरह है। हम इसके पीछे जितने भागते हैं उतनी ही यह हमसे दूर होती जाती है और जैसे ही खड़े रहकर हम अपने आसपास देखते हैं तो वह हमें अपने पैरों में ही खड़ी मिल जाती है। वास्तव में प्रसन्नता बाहरी संसाधनों या परिस्थितियों से प्राप्त होने वाली वस्तु नहीं है। यह तो हमारे अंतः करण में ही है और हमें सदा उपलब्ध भी है परंतु हम समस्याओं में इतने उलझे होते हैं कि हल सामने होने पर भी दिखता नहीं है। अतः यदि हम अपनी मनः स्थिति को तदनुकूल बना ले तो निश्चित ही तत्काल उसका अनुभव कर सकते हैं।

सकारात्मक सोच और आशा– जीवन का उत्सव वही मनाता है जो मृत्यु की ऊँगली थाम कर चलता है अतः भय को नहीं आशा को चुनें, नकारात्मकता को नहीं सकारात्मकता को चुनें। सदैव याद रखें,– 'जीवन मृत्यु की छाया में ही पलता है'। बहुत कम लोग जानते हैं कि यह नारकीय उत्पीड़न उनकी स्वयं की उपज है – जिसे मनःक्षेत्र में स्वयं ही बोया और स्वयं ही काटा जाता है। जैसे किसान खेत में अपनी इच्छित फसल बोता है, ठीक उसी प्रकार मनुष्य भी सुख और दुख के, स्वर्ग और नरक के बीच बोता है। प्रयत्न पूर्वक उन्हें सींचता भी है और काटता भी है परन्तु भ्रांति वश उन्हें दूसरे के कृत्य समझ लेता है, यह आत्मप्रवंचना के अतिरिक्त कुछ नहीं।

दुःख का बीज बो कर सुख की फसल नहीं प्राप्त की जा सकती है। वस्तुतः विचार महत्वपूर्ण होते हैं। इनकी स्थिति बहते हुए जल के समान है जिसमें आप गंदगी मिलाएंगे तो वह नाला बन जाएगा और सुगंध मिलाएंगे तो वह गंगाजल कहलायेगा। अतः कोशिश करो जिंदगी का हर पल अच्छे से गुजरे क्योंकि जिंदगी रहे ना रहे मगर अच्छी यादें हमेशा जिंदा रहती है। अतः सकारात्मक सोच और आशा का दामन कभी ना छोड़ें। यह कभी ना सोचें,– जिंदगी में कितने पल हैं वरन् यह सोचें,– हर पल में कितनी जिंदगी है। फिर देखिए आपका नजरिया कैसे बदल जाएगा।

विश्वास स्वयं पर एवं परमात्मा पर– जीवन है तो संघर्ष तो रहेंगे ही परंतु विश्वास रखें स्वयं पर और परमात्मा पर भी। गीली मिट्टी को आग में ना डालें तो गीली ही रहती है। शीतल जल देने वाले मिट्टी के पात्र को भी आग में तपना पड़ता है। ठीक उसी प्रकार जीवन को नियंत्रित करने का साधन अनुशासन ही दुःख है। वस्तुतः वह अनुशासन तो उसमें निखार लाता है। ध्यान रहे जो अंधेरे के डर से दीपक नहीं जलाते वह अंधेरे में ही रहते हैं परंतु दीपक उस अंधकार को नष्ट कर रास्ता दिखाता है, या यह कहना चाहिए कि प्रकाश का अभाव अंधकार है जिसे दीपक नष्ट कर देता है। ठीक इसी प्रकार स्वयं पर व परमात्मा पर विश्वास का अभाव दुःख व निराशा है। आप विश्वास की डोर थामें रहिए,– फिर देखिए कोई संघर्ष आप के मुख से मुस्कान नहीं छीन सकता। जीवन में जो जो संग्रहणीय होता है हम उसे भूल अभाव का रोना रोते रहते हैं। परंतु हमें चाहिए ,– जीवन के हर मोड़ पर सुनहरी यादों को जीवित रहने दें, जुबां पर हरदम मिठास रहने दें,– यदि इस अंदाज से जीवन जीने का प्रयास करेंगे तो ना स्वयं उदास रहेंगे ना दूसरों को रहने देंगे,– अजमा कर देख लीजिए।

निर्भय एवं उत्साही रहें – शिकारी को देखकर शुतुरमुर्ग की तरह बालू में मुँह छिपा लेना और यह सोचना,– 'जब मैं ही शिकारी को नहीं देख रहा तो वह भी मुझे कैसे देख सकेगा'? यह एक उपहासास्पद विडंबना के अतिरिक्त कुछ नहीं है जो उसे बचाव के स्थान पर सहज ही शिकारी की पकड़ में धकेल देती है। वस्तुतः ऐसे समय में अपनी क्रिया और उसकी प्रतिक्रिया को समझते हुए दुःखों का कारण और निराकरण ढूढ़ने में जुटने की आवश्यकता होती है, जिसे न कर हम दूसरों पर दोष मढ़ते हैं और स्वयं को निर्दोष समझते हैं।

वस्तुतः भय दुनिया का सबसे बड़ा पिंजरा है। पराजय नहीं वरन् व्यक्ति को भय तोड़ता है। सदैव ध्यान रहें,– एक द्वार बन्द हुआ है, सभी द्वार नहीं। तो देर किस बात की? हमें दूसरा द्वार खोजना होगा क्योंकि हालात बदलने पर ही हालत बदलती है।

कभी–कभी साधन संपन्न एवं अनुकूलताओं से भरे पूरे व्यक्ति भी विकृत चिंतन का शिकार होकर अहर्निश दुःख–दुर्भाग्य का रोना रोते हुए त्रास सहते नजर आते हैं। इसके विपरीत जिनके सोचने का तरीका सही है वे स्वल्प साधनों में, कठिन परिस्थितियों में, अनगढ़ लोगों के मध्य रहते हुए भी ताल मेल बैठा लेते हैं।

वस्तुतः उड़ने के लिए पंख ही नहीं, ऐसे हौसलों की जरूरत होती है जो सागर की तरह गहरा हो। खुशबू हवा को बांधती नहीं वरन् उसके सर्वोच्च को सार्थक कर देती है। वैसे ही समझा यह जाता है कि परिस्थितियाँ मनुष्य को प्रभावित करती है और सुख–दुख का आधार बनती है जबकि वस्तुस्थिति मनःस्थिति की प्रधानता सिद्ध करती है और बताती है कि चिंतन का स्तर ही उल्टे सीधे दृश्य दिखाता है, रुलाने–हँसाने वाले सपने सामने ला खड़े करता है। अतः चिंतन के इस केंद्र को पकड़ लिया जाए, समझ लिया जाए तो खीज से, तनाव से, सदैव के लिए मुक्ति मिल सकती है। आनंद उल्लास का वातावरण अनवरत जीवन का अभिन्न अंग बन सकता है।

प्रसन्नता मन का विषय– प्रसन्नता मन का विषय है। प्रसन्नता की अनुभूति मन में होती है, जबकि सुख–सुविधाओं की पहुँच देह तक ही सीमित होती है क्योंकि स्थूल वस्तुओं का संबंध स्थूल वस्तुओं से ही होता है, वह सूक्ष्म तत्वों को प्रभावित नहीं कर सकती। जैसे प्रकाश को बांधने का, हवा को छेदने का कार्य अस्त्र–शस्त्र से नहीं किया जा सकता। स्थूल दीवार उनमें अवरोध उत्पन्न करने पर भी उनके स्वरूप को प्रभावित नहीं कर सकती, उसी प्रकार बाहरी सुख–साधन प्रसन्नता में व्यवधान भले उपस्थित कर दे पर उसे प्राप्त नहीं करवा सकते।

प्रसन्नता का संबंध मनःजगत से है, अतः उसे धन से, साधन संपन्नता से नहीं प्राप्त किया जा सकता। उसकी क्षुधा मनः स्थिति के स्तर पर ही तृप्त की जा सकती है। परिस्थितियों का परिवर्तन मादक द्रव्य के समान क्षणिक आनन्द का भ्रम भले ही उत्पन्न कर दे परंतु उससे उसके वास्तविक प्रयोजन की सिद्धि नहीं होती। यह स्थिति ठीक वैसी ही है जैसे तृषा तृप्ति शीतल जल से ही होती है, सोड़ा वाटर, चाय या कश्वफी से नहीं। अतः प्रसन्नता की प्यास को बुझाने के लिए भी उसी स्तर के जल की आवश्यकता होती है और यह जल है,– जीवन के प्रति सुलझा हुआ दृष्टिकोण।

जीवन के प्रति सुलझा हुआ दृष्टिकोण– प्रसन्नता हमारे लिए जितनी आवश्यक है उसकी पूर्ति हेतु हमारे चित्त में स्वस्थ दृष्टिकोण भी उतना ही आवश्यक है, परंतु पग–पग पर दुःखों का रोना रोने वाले व्यक्ति की स्थिति ठीक वैसी ही है जैसे स्वच्छ पर्यावरण के मध्य कोई व्यक्ति नाक मुँह बंद कर दम घुटने की बात कहे। अधिकांश मनुष्य जिन दुःखों से दुःखी पाए जाते हैं उनमें से अधिकांश मानसिक होते हैं। अनुमानतः मानव जीवन में 5 प्रतिशत शरीर पीड़ा जैसे वास्तविक कष्ट हैं और 95 प्रतिशत मानसिक या काल्पनिक, जिनका अस्तित्व अंधकार की तरह है जो दिखता तो है पर है नहीं। पुनश्चः जैसे प्रकाश के अभाव का नाम अंधकार है उसी प्रकार दूरदर्शी विवेक बुद्धि के अभाव का नाम मानसिक कष्ट है जिसकी अभिव्यक्ति खीझ, शोक, उद्वेग, असंतोष, रोग, काम, क्रोध, लोभ, मोह, मद, मत्सर, ईर्ष्या, द्वेष, आक्रोश, प्रतिशोध इत्यादि मनोविकारों की प्रतिच्छाया स्वरूप मानसिक कष्टों की विभीषिका बनकर अभिव्यक्त होती है और हमें नारकीय पीड़ा पहुँचाती है।

प्रसन्न रहने की मनोभूमि बनाएँ– प्रसन्न रहने की मनोभूमि तैयार करने हेतु निम्न कार्य करें– उपलब्ध साधनों में उपयोगिता खोजने की गुण ग्राही दृष्टि अपनाते हुए कार्य किया जाए। सफलता–असफलता को दूसरे के हाथ की वस्तु समझकर कर्तव्य पालन पर अपने संतोष को केंद्रित रखा जाए।

भौतिक संपदा को अभाव रहने तक ललक जगाने वाली और मिलते ही भार बन जाने वाली तृष्णा समझ कर अपनी सफलता का समग्र केंद्र परिष्कृत गुण, कर्म, स्वभाव को माना जाय जिससे महत्वाकांक्षाओं का केंद्र बदल जाएगा। व्यक्ति आत्मवान बनने का प्रयास करे, संपत्तिवान नहीं, क्योंकि इससे न केवल वह स्वेच्छा से महामानव बन सकता है अपितु जिससे उसे प्रसन्नता के भी संपूर्ण आधार मिल जाते हैं। साथ ही व्यक्तित्व के प्रभावशाली हो जाने से आत्मसम्मान और लोक सम्मान में भी कमी नहीं रहती। ऐसी संतुष्ट और आशान्वित अंतः चेतना की पहचान होती है, – उनके अधरों की मुस्कान और जिसमें समाहित होता है आकर्षक आकर्षण। लगता है मानों आंतरिक उल्लास मुस्कान रूपी सुगंध के रूप में अपनी उपस्थिति का प्रमाण दे रहा है।

प्रसन्नता : मानसिक साधना– प्रसन्नता को मानसिक साधना के रूप में अपनाया जाना चाहिए। एकांत हो या कार्य का समय, हर वक्त प्रसन्न मुद्रा में रहने का प्रयत्न करना चाहिए। इसके लिए स्वयं परीक्षण हेतु दर्पण का सहयोग लें। उसमें देखिए कहीं आपके चेहरे से जीवन की परेशानियाँ झांक तो नहीं रही। यदि उदासी, खींझ, क्रोध, चिंता का लेश मात्र भी दिखे तो तुरंत सजग होकर उसे दूर करने का प्रयास करना चाहिए और उसके स्थान पर मुस्कान को स्थापित करना चाहिए। सतत अभ्यास इसे आपकी आदत के रूप में परिवर्तित कर देगा तब आपके व्यक्तित्व में चार चांद लग जाएंगे।

जब भी किसी से कहीं पर भी मिलें, वार्ता करें, मुस्कराहट के रूप में उस मिलन पर प्रसन्नता व्यक्त करें तो सामने वाले को अपने आत्मीयता पूर्ण स्वागत सत्कार का आभास होता है। यह आनंददायक भावनात्मक अनुदान भौतिक उपहार से श्रेष्ठ होता है और सामने वाले की यह तृप्ति हमें भविष्य में उसके स्नेह और सहयोग के प्रति आशान्वित करती है। दूसरों को अपना बनाने के इस जादुई तरीके से अधिक सरल सहज और प्रभावशाली तरीका दूसरा नहीं।

सार रूप में सांस्कृतिक धरातल पर हमारी आस्थाओं, मान्यताओं, दृष्टिकोण में इस आदर्श की प्रतिष्ठा से ही ईर्ष्या और असंतोष की प्रवृत्ति से मुक्ति मिल सकती है। प्रसन्नता, शांति और आनंद को प्रभु की अनंत अनुकंपा, देवीय वरदान मान अपने स्वभाव का अंग बना कर ही हम प्राकृतिक परिवेश का आनंद ले कर प्रसन्न रह सकते हैं और बन सकते हैं महामानव। तो फिर देर किस बात की.....

नव वर्ष में खुशहाल बने हमारा हिंदुस्तान

लाल देवेन्द्र कुमार श्रीवास्तव
उत्तर प्रदेश

नव वर्ष में हमारा हो ऐसा सुंदर साहित्य सृजन,
सामाजिक समरसता के लिए हो चिंतन–मनन।
अनैतिकता, कुरीतियों व आडंबरों पर दृष्टि पड़े,
अन्याय–शोषण का प्रतिरोध, हम न करें सहन।।

मुजलिमों और वंचितों का सृजन में हो स्थान,
प्रगतिशीलता के लिए हमारी यूँ बने पहचान।
नव वर्ष में दौलत और पद भले ही मिल जाए,
जीवन में इंसानियत का हम सदैव रखें ध्यान।।

गरीबों को हो समृद्धि, फले–फूले खेत–खलिहान,
नव वर्ष में न कोई दुःखी, न हो कोई भी परेशान।
न किसी का घर उजड़े, न हो कोई भी अनाथ,
अमीर–गरीब सबके सिर पर रहे प्रभु का हाथ।।

नव वर्ष में सभी के चेहरे पर खिली हो मुस्कान,
जो जून की रोटी मिले व बदन पर हो परिधान।
मंगलमय कामना करें, अपने साहित्य सृजन में,
सभी को खुशियाँ हो और मिले भरपूर सम्मान।।

सभी का सर्वांगीण विकास हो, न आए व्यवधान,
नए वर्ष में न कोई चिंतित, न हो कोई भी हैरान।
सद्गुण, संस्कृति व संस्कार सभी के हिस्से में आए,
नव वर्ष में खुशहाल बने हमारा प्यारा हिंदुस्तान।।